जून 2013

विषय– क्रमणिका

01.	सम्पादकीय	.....	01
02.	प्रेम प्रम सब कोई कहे...	कान्ता भगत	03
03.	हबसे का पातसाह	नीरु खुराना	06
04.	प्रेम ही जीवन है	गुणवन्त कौर	08
05.	बिना विचारे रहत है	स्वामी कृष्ण सिद्धार्थ	11
06.	क्या आपके पास.....	.....	13
07.	आचरण	.....	15
08.	बीतक	अमरलाल सेठी	17
09.	रुप और स्वरुप	उमेश पुण्डीर	21
10.	बुजुर्गो के प्रति.....	.....	24
11.	हौज कौसर तालाब	नलिनी ढींगरा	26
12.	साहित्य सूची	.....	29

संरक्षक–संस्थापक
श्री राजनस्वामी जी

मुख्य सम्पादक
सद्गुरु प्रसाद आर्य

सहायक सम्पादक
प्रभाकर

प्रकाशक :–
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट,
नकुड़ रोड, सरसावा
जिला–सहारनपुर, उत्तर प्रदेश
फोन – 01331 246000, 246871
वेबसाईट :– www.shriprannathgyanpeeth.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.com

मुद्रक :

ओम इंक्स, यमुना नगर
हरियाणा, मो. 09315624380

न्यौछावर (भारत में)
वार्षिक सेवा 110 रूपये
आजीवन सेवा 1000 रूपये
न्यौछावर (विदेश में)
वार्षिक सेवा
आजीवन सेवा

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक, प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

सम्पादकीय

एक परिदृश्य

ठीक अट्ठारहवें दिन कुरूक्षेत्र शान्त हुआ। परिणाम कौरवों के लिए विनाश, पाण्डवों की विजय और कृष्ण के लिए गान्धारी का शाप–'' पशुवत् मरेगा तू अकेला, अवश, असहाय, और पीड़ित। छत्तीस वर्ष बाद यादव भी आपस में लड़ मरे। प्रवास क्षेत्र में इस अन्धकार के बीच बिखरे पड़े थें पुत्रों, पोत्रों, प्रवोत्रों मित्रो पूजनीय एवं अन्य कुटुम्ब जनों के शव।

एक विशाल पीपल के पेड़ पर अपना बाँयां पाँव मोंड़ कर उसके घुटने पर अपना दाहिना पांव टिकाए लेटे हुए हैं श्री कृष्ण। देह धारी थे कृष्ण, पर मन एवं आत्मा देह से परे जा चुके थे और परब्रह्म के ध्यान में आँखे मुंदी थी। परन्तु अन्दर से बड़े मर्माहत थे।अपने स्वजनों को मरते देख विषाद का महासागर उनके हृदय में उमड़ रहा था। बाहर जो हो रहा है उसे नही देखना चाहते। उनके मन में एक संवाद चल रहा है। बड़े ही व्यर्थित और बेचैन हैं। एक इच्छा जागती है कि जाते जाते उस वंशीधर, बंशी बजैया, रास का रचैया उस को मिल पांऊँ। वह द्वारिका के वैभव में, कुरूक्षेत्र की गीता में और न सत्ता के सिंहासन में मिला। कहाँ मिलेगा ?।

वह तो केवल एक ही जगह मिल सकता है–राधा के हृदय में। राधा के हृदय में तो ब्रज है। वहाँ मैं कैसे जा सकता हूँ ?तो क्या राधा को ही आना होगा ?इस तरह अपनी जीवन गाथा के पन्ने पलट रहे हैं। कानों में आवाज सुनाई पड़ती है–जा रहे हो कान्हा सचमुच अकेले जा सकोगे ?प्रश्न करती इन आँखो के साथ न जाने और कितनी आंखो की याद सामने घूमने लगती है।

अचानक दाहिने तलवे में एक तीर आ लगता है। आखेटक (शिकारी) क्षमा याचना कर रहा है। हे द्वारिकानाथ मैं तो वनचर समझ ,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,। मेरा तीर आपके पैर में लग गया। चलो यह भी अच्छा हुआ, पैर में लगा हृदय में नहीं लगा, वहाँ तो राधा थी, कृष्ण यह कह बुदबुदाए अर्ध चेतना की अवस्था में स्मृतियाँ उन्हें एक उत्सव में खींच ले गईं। हर तरफ खुशी का सैलाब था। विवाह जैसा माहोल था। हास परिहास चल रहा था। यह क्या ?अचानक श्री कृष्ण पीड़ा से छट–पटाने लगे। सभी उनके चेहरे की पीड़ा की रेखाओं के पढ़ने लगे, पर कृष्ण तो तड़फते चले जा रहे थे। चन्दन का लेप, शूलान्तक वटी, कोमलांगी स्पर्श सब व्यर्थ। वैद्य लज्जित हो एक दूसरे का मुँह ताक रहे थे। सत्यभामा ने डबडबाई आँखो से पूछा नाथ ! क्या करें ? उत्तर मिला– मेरे किसी परम प्रिय की चरण धूलि का लेप ही मेरी पीड़ा को शान्त कर सकता है। कृष्ण की पीड़ा पल–पल बढ़ती जा रही थी। सोलह हजार रानियाँ पटरानियाँ, करोड़ों भक्त, सखा सहोदर सभी अपने प्राण देकर पीड़ा का हरण करने के लिए तो तैयार थे परन्तु श्री कृष्ण के मस्तक पर अपनी चरण धूलि लगा कर नर्क का भागी बनने को कोई बनने को कोई भी राजी न था। सभी ने अपने पांव पीछे खींच लिए। नारद जी भी यह दृश्य देख रहे थे। उनसे श्री कृष्ण की यह पीड़ा सहन नहीं हो रही थी। वह श्री कृष्ण के परम प्रिय की खोज में निकल पड़े। ब्रज में जाकर उन्होंने गोपियों को श्री कृष्ण की पीड़ा के बबारे में बताया तो राधा ने उसी समय नारद जी से कहा देरी मत करो। यह लो मेरे चरणों की धूल और अपने पाँवों को जल से धोते हुए, नारद जी को देते हुए कहा

कि मेरे चरणों की धूलि का जल से लेप बना कर श्री कृष्ण के मस्तक पर लगा देना। यह देख सभी हतप्रभ थे, यह कैसी आराधिकता है ?जिसे नर्क का भी भय नहीं। यह सब देख कृष्ण मुस्कुरा रहे थे।

मन रूपी मंजूषा स्मृतियाँ उभर कर निकलती चली आ रही थीं। कभी–कभी रूकमणी राधा के नाम पर अक्सर श्री कृष्ण जी का चिड़ाया (छेड़ा) करती थीं। क्या सचमुच ही राधा बड़ी सुन्दर है ?कृष्ण कहा करते थे, हाँ ! बहुत ही सुन्दर। इतनी सुन्दर कि उसके सामने तो सौदर्न्य की सभी परिभाषायें मौन पड़ जाती हैं। एक बार कुरूक्षेत्र में सूर्योपराग का उत्सव था। नन्द, यशोदा, गोप ग्वाल और गोपियों के साथ राधा भी आई थी। भले ही रूकमणी ने राधा का स्वागत स्वयं किया था, परन्तु कृष्ण को राधा को निहारते देख, इतना बावला सा होते देख, रूकमणी ईर्ष्या की ज्वाला से जल उठी। अपनी यह जलन सौंप दी राधा को गर्मा–गर्म दूध में मिला कर, राधा तो इसे एक धूंट में पी गई परन्तु सारा द्वेष, सारी जलन सारी ईर्ष्या की पीड़ा झेलनी पड़ी श्री कृष्ण जी को।

अगले दिन जब श्री कृष्ण के पैर दबाते हुए रूकमणी ने देखा कि उन के पैरो पर छालें हैं, मानो किसी ने गर्म खोलता हुआ तेल डाला हो। यह क्या हुआ द्वारिकानाथ ! ये फफोले कैसे ?कृष्ण बोले '' प्रिय ! राधा के हृदय में जो बसता हूँ मैं। तुम्हारी जिस जलन को राधा चुपचाप पी गई, देखो वही मेरे तन से फूट पड़ी है।

गौएं चराने वाले गोपाल से द्वारिकाधीश बनने तक कुरूक्षेत्र से प्रभास तक कि यात्रा तक राधा का यही प्रेम ही तो रसधार बनकर बहता रहा है। कृष्ण के भीतर गीता का आधार भी यही प्रेम था, महारास के रस का आधार भी यही प्रेम था। राधा को याद करते–करते कृष्ण की आँखों से जल की धारा फूट पड़ी– तुम से अलग हो कर कहाँ जाऊँगा राधे ?भला छाया से काया कैसे अलग हो सकती है। जहाँ तुम हो, वहाँ मैं हूँ। तुम्हारे अतिरिक्त मेरी पीड़ा कौन हर सकता है ?सारी सृष्टि को शरण देने का सामर्थ्य भले ही कृष्ण में हो पर कृष्ण को शरण देने वाला हृदय तो केवल राधा का ही है।

डूबती द्वारिका के अन्धेरों से अर्थ हीन आवाजें आ रही हैं तो दूसरी ओर से दूर कहीं से कालिन्दी की लहरों पर बहता हुआ निःशब्दों का दिया जो कह रहा है, जा रहे हो कान्हा–क्या सचमुच ही अकेले ?जा सकोगे !

ऐसा था अनन्त का अन्त। ये थे उनके अन्तिम क्षण !!!

नोट :– सुन्दरसाथ जी घटना पर नहीं अपितु भावों पर ध्यान दें।

प्रणाम जी

अमर लाल सेठी

अबोहर

09463233945

निमंत्रण

प्यारे सुन्दरसाथ जी! आप सभी को सूचित करते हुए अपार हर्ष हो रहा है कि गत वर्षों की भाँति इस वर्ष भी श्रावण मास की पंचमी दिनाँक 27.07.2013 से एक माह पर्यन्त बीतक चर्चा का आयोजन किया जा रहा है, जिसमें अध्यात्म जगत् के मूल प्रश्नों एवं गूढ़ रहस्यों पर विस्तारपूर्वक विवेचन किया जायेगा।

अतः आप सभी सुन्दरसाथ एवं धर्मप्रेमी सज्जनों से अनुरोध है कि अधिक–अधिक संख्या में पधारकर ब्रह्मज्ञानरुपी प्रकाश से अज्ञानरुपी अन्धकार को समाप्त करें।

सेवा विशेष

जो सुन्दरसाथ रसोई की सेवा देना चाहते हैं कृपया यथा समय सूचित करने का कष्ट करें।

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ समिति,
सरसावा

"प्रेम–प्रेम सब कोई कहे, प्रेम न चीन्हे न कोय। आठ पोहोर भीना रहे, प्रेम कहावे सोय।।"

प्रेम की व्याख्या तो अनेक सन्तों, मुनियों, कविजनों इत्यादि ने बहुत की परन्तु प्रेम में छिपे हुए मर्म को कोई समझ नहीं पाया। तुलसी, जायसी, सूर तथा मीरा इत्यादि भक्तों ने प्रेम को सर्वोपरि मानते हुए अपने अपने इष्ट के गुणों तथा सौन्दर्य की अनेक प्रकार से सराहना की परन्तु प्रेम को पाने का एक ही प्रयास मात्र ही था। यही नहीं सूफी सन्तों ने भी इश्क के महत्व को समझ कर उसे प्राप्त करने का अथक प्रयास किया परन्तु लक्ष्य विहीन होने के कारण उनकी भी प्रेम भक्ति इसी ब्रह्माण्ड के भीतर ही सिमट कर रह गई। परब्रह्म की आत्माएँ जब इस संसार में ब्रज की गोपिकाओं के रूप में आईं तो उन्होंने श्री कृष्ण को प्रेम से रिझाया तो बहुत, परन्तु स्वप्न की बुद्धि होने के कारण पहचान न हो पाई। जब कलियुग में तारतम ज्ञान के रूप में जाग्रत बुद्धि आई तो प्रेम अपने वास्तविक लक्ष्य सहित जाहेर हुआ। परन्तु समय के साथ–साथ विज्ञान का विस्तार भी हुआ, ज्यों ज्यों बुद्धि विकसित हुई प्रेम विज्ञान की ओट रूपी अंधेरे में ही सिमट कर रह गया। आज प्रेम लक्षणा भक्ति का स्वरू प कर्मकाण्ड तक ही सीमित हो कर रह गया है। अनेक देवी देवताओं की भक्ति केवल पनी कामनाओं की पूर्ति के लिए की जाती है। भगवान की आरती, भोग, मूर्तियों की सजावट के लिए वस्त्र श्रृंगार इत्यादि ही प्रेम की परिभाषा में शामिल हो गये हैं। जप, तप के साधन भी प्रेम के लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल रहे।

'' पढ़े तब पावें इसक को, जब खुलें माएने मगज।

इश्क बिना करें बन्दगी, कहें हम टालत हैं करज।। परिक्रमा प्रकरण 39/8

प्रेम के वास्तविक स्वरूप से आज भी लोग अनजान हैं, जब परब्रह्म की ही पहचान नहीं है, तो प्रेम के भीतर छिपे हुए रहस्य को वे क्या समझेंगें ?जब पार के पार के भी पार तक कोई पहुँचा ही नहीं तो स्वाभविक रूप से प्रेम की तलाश तो इसी ब्रह्माण्ड तक ही सीमित रही। श्री प्राणनाथ जी जब वाणी में प्रेम इश्क को संजो कर लाये, तो प्रेम का वास्तविक स्वरूप भी उजागर हुआ। जिस प्रकार शक्कर में मिठास, सूर्य में तेज तथा चाँद में चाँदनी का गुण स्वभाविक रूप से उपस्थित होता है, इसी प्रकार परब्रह्म अक्षरातीत अनन्य प्रेम अथवा इश्क से ओत प्रोत पूर्ण स्वरूप हैं। प्रेम का विशाल सागर जब अक्षरातीत के हृदय में ही समाया हुआ है, तो उन के वतन में तो सर्वत्र इश्क का साम्राज्य होगा ही, और जहाँ की समस्त सृष्टि इश्क से परिपूर्ण हो वहाँ तो आनन्द ही बरसेगा। परमधाम का कण–कण सत, चिद् तथा आनन्द के गुणों से सराबोर है जब कि इस सपने के ब्रह्माण्ड में सत, रज, तम के गुण पाँच तत्वों के कण–कण में समायें हैं। तो फिर पाँच तत्व तथा तीन गुणों से भरपूर क्षर ब्रह्माण्ड भला इश्क के सागर की एक लहर का भी सामना कैसे कर पायेगा ?

प्यारे सुन्दरसाथ जी, यही कारण है इश्क के सागर की एक लहर मात्र ही संसार में आई है, और वह भी परब्रह्म की अपनी आत्माओं के अपमान के कारण श्री प्राणनाथ जी स्वयं इस संसार में लाये। इस इश्क रूपी अनमोल उपहार का स्वागत केवल अक्षरातीत की आत्माओं ने किया क्यों कि अर्श अजीम के

इश्क का जरा भी यहाँ के जीव के तन सहन नही कर सकते थे। परब्रह्म की आत्माओं को धनी ने उतना ही इश्क दिया, जितना वह सहन करने के योग्य थी, प्रेम की झलक मात्र भी ब्रह्मसृष्टि को अखण्ड की अनुभूति इस संसार में रहते हुए भी करवा देती है। फिर तो यह संसार नजरों से भी ओझल होने लगता है। अखण्ड परमधाम सेहेरग से भी निकट दिखाई देता है।

प्रेम नजरों जो कछू आया, ताको इत ही अखंड पोहोंचाय।

प्रेम हुतो बड़ो विस्तार, भवजल हुतो जो खार।। परिक्रमा प्रकरण 57

जब तक हृदय में प्रेम नहीं आता तब तक अन्तःकरण तथा इन्द्रियों में संसार तथा माया की चाहना बनी रहती है फलस्वरूप व्यक्ति चाह कर भी माया से विरक्त ही हो पाता। यद्यपि प्रेम का बीज गुप्त रूप से सृष्टि के प्रत्येक प्राणी के हृदय में समाया हुआ है परन्तु प्रेम पात्रता के अनुसार ही मिल पाता है। यहीं कारण है कि सृष्टि के प्रत्येक प्राणी में प्रेम करने तथा प्रेम पाने की गहरी प्यास है। परन्तु प्रेम की यह गहरी प्यास परब्रह्म से नाता जुड़े बिना नहीं बुझ सकती, प्रेम के बिना संसार में चहुँ ओर व्याप्त छल कपट से नाता जुड़ा रहता है इसीलिए सन्तोष रूपी धन को लोगा अपना नहीं पाते। यही कसर है कि आज प्रेम ही मोह का रूप बन कर रह गया है, जो अपनी सन्तान तथा सगे सम्बन्धियों से अत्याधिक मोह के कारण दिलों में क्रोध, लोभ,तथा तृष्णा इत्यादि विकारों को जन्म देती है। इस मोह को ही यह संसार प्रेम समझ रहा है।

इस संसार में जहाँ भी दृष्टि डालो, सर्वत्र माया का ही साम्राज्य है तो इस अनमोल न्यामत प्रेम की खोज कोई कहाँ करे परन्तु इस दुर्लभ प्रेम को हम अपने दिलों में अवश्य पा सकते हैं क्यों कि मारिफत स्वरूप परमसत्य के रूप में प्रेम का बीज हमारी आत्मा के के दिलों में समाया हुआ है, जिस का प्रकटी करण हकीकत अर्थात् सत्य के रूप में इस मारिफत स्वरूप बीज के विस्तार के रूप में हुआ हैं।प्रेमरूपी यही बीज वृक्ष के रूप में जब विस्तार लेता है तो इस में से फल फूल भी दिखाई देने लगते हैं। यद्यपि बीज रूप से प्रेम हमारी आत्मा की धरती पर उपस्थित है फिर भी हम अपने जीव की तृष्णाओं को पूरा करने में व्यस्त हैं। यदि हम ने मारिफत स्वरूप इस बीज को समपर्ण रूपी खाद पानी से सींचा होता तो यही बीज अपने विस्तृत रूप से फल फूल के रूप में दिखाई देता और यदि अब भी हम ने जीव की सांसारिक तृष्णाओं रूपी मिट्टी में से पत्थर रोड़े बीन कर इसे साफ कर के प्रेम रूपी पौधे को फलने फूलने का अवसर नहीं दिया तो यही प्रेम रूपी बीज सुप्त अवस्था में पड़ा रह जायेगा।

'' वृथा गए एते दिन, जो गए इस्क बिन।

मैं हुती पिया के चरन, मैं रह न सकी सरन।। परिक्रमा प्रकरण 8

यद्यपि आत्मा के हृदय में प्रियतम का प्रेम रूपी बीज सदा उपस्थित रहता है, परन्तु जीव भाव में लिप्त रहने के कारण आत्मा की प्रेम की प्यास बुझ नहीं पाती। प्रेम की चाहत तो समस्त सृष्टि के जीवों में भी है परन्तु प्रेम दिलों की शोभा बने, उस के लिए तो नवनीत जैसा कोमल हृदय चाहिए जिस में भावना रूपी लहरें हिलोरें लेने लगें। यदि हम परमधाम तथा युगल स्वरूप का दीदार इस छल बल वाली माया से व्याप्त संसार में करना चाहते हैं तो हमे ध्यान का सहारा लेना पड़ेगा। क्योंकि ध्यान और प्रेम पक्षी के दो पंखों की भाँति हैं, जिन का आश्रय ले कर हम आपने लक्ष्य की ऊँचाई को पा सकतें हैं, ध्यान एक ऐसी कला है जो मन पंछी को साध कर एकाग्रता प्रदान करता है। प्रत्येक प्राणी के मन में क्रोध, धृणा, ईर्ष्या, स्वार्थ इत्यादि मनोविकार उपस्थित होते हैं परन्तु ध्यानरूपी एकाग्रता से हमारे हृदय की समस्त कटुता तथा कलुष धुल कर मधुरता में परिवर्तित हो जाती है। ऐसे समय में जब ध्यान के मध्य में मन की कलुषता धनी की याद में बाधक बन जायें तो मन बिखर जाता है। ऐसे समय में साँसों पर ध्यान दे कर शुद्ध साँसों को हृदय में संजों ले तो विकारों से यह मन दूर चला जाता है। धीरे–धीरे यह मन सदा के लिए विकार रहित हो जाता है।

स्वतन्त्रता प्रेम की आत्मा हैं इस

लिए संकुचित विचार धारा के मार्ग में रोड़ा बन कर खड़ी हो जाती है। प्रेम रूपी पौधे को पनपने के लिए खुले आकाश की आवश्यकता होती है। प्रेम ब्रह्मसृष्टि का तो आत्मिक आहार है परन्तु जीवों को भी प्रेम चाहिए। जीव सृष्टि भी ध्यान की एकाग्रता में खो कर प्रेम को प्राप्त कर सकति है क्यों कि प्रेम ही परब्रह्म के दीदार का एक मात्र रास्ता है। ब्रह्मसृष्टि यदि प्रियतम की शोभा को दिल में बसाना चाहति है तो उसे संकुचित विचारधारा का त्याग कर के खुले दिल से सभी सुन्दरसाथ को अपनाना चाहिए। धनी, निर्धन सुन्दर अथवा करूप, वृद्ध अथवा युवा सभी सुन्दरसाथ प्रेम में समान हैं। यही नहीं सुन्दरसाथ के अतिरिक्त भी कुछ नये लोग आते हैं तो उन्हें भी अपनापन देकर स्वयं के ब्रह्मसृष्टि होने का प्रमाण, रहनी द्वारा प्रस्तुत करना चाहिए। ब्रह्मसृष्टि की दृष्टि में यदि प्रेम ही प्रेम होगा तो इन का आहार तथा व्यवहार भी प्रेम का ही होगा।

इस्क है याको आहार, और इस्कै याको वेहेवार।

इस्क है याकी दृष्ट, ए इस्कै को है सृष्ट।। परिक्रमा प्रकरण 48

परब्रह्म के प्रेम इश्क से ओत प्रोत वतन में सदैव आनन्द ही बरसता है और यह संसार छल वल से ओत प्रोत अपने अपने स्वार्थ पर टिका है। जो कुछ परमधाम में है, उस के उलट यहाँ की भूमि पर है, यही कारण है कि वहाँ की दृष्टि से यह संसार निरर्थक है। इसी लिए इस क्षर ब्रह्माण्ड को खारे जल का सागर कहा जाता है। खारा जल न तो पीने के योग्य होता है और नहीं स्नान करने के अथवा और किसी भी काम में लाया नहीं जा सकता है परन्तु अर्श अजीम के इश्क सागर की लहर मात्र ने ही इसके खारे जल को समाप्त कर के इसे अमृत के समान बना दिया अर्थात् परमधाम से उतरी हुई आत्माओं के दिलों को अर्श अजीम के इश्क की लज्जत से सराबोर कर दिया जब अपने वतन के अखण्ड सुखों का स्वाद सुन्दरसाथ ने चखा तो उन के अन्तःकरण तथा इन्द्रियाँ प्रेम से सराबोर हो गई। ब्रह्मसृष्टि का हृदय जो इस संसार में चारों ओर व्याप्त छल –कपट को देख कर वैराग्य में डूब चुका था अखण्ड प्रेम के आ जाने से उस की समस्त प्रवृत्तियाँ उलट कर परब्रह्म के प्रेम रूपी चिन्तन, मनन में डूब गईं।

प्रेम अन्दर ऐसी भई, नींद माहें की उड़ कहुं गई।

गुन अंग इन्द्री पख, पिया प्रेमे हुए सब लख।। परिक्रमा प्रकरण 48

अक्षरातीत के कोमल हृदय में अनन्त रसों की भरमार है परन्तु बेशुमार को शुमार में लाने के लिए इन में से प्रमुख आठ रसों का ही वर्णन ब्रह्मवाणी में किया गया है। इन आठ रसों ने ज़ाहेरी रूप में प्रकट हो कर आठ सागरों का रूप ले लिया है, ये आठों सागर अर्श की धरती पर अपने गुणों के अनुरूप सदैव रस बरसाते रहतें हैं। सर्वरस सागर जिस में शेष सातों सागरों का रस भी समाया हुआ है, परमधाम से नासूत की धरती पर उतरी हुई आत्माओं पर मेहर सागर के नाम से उन पर मेहर की वर्षा करता रहता है। पिया ने स्वयं दो फरिस्ते जबराईल तथा असराफील ब्रह्मसृष्टि की रक्षा के लिए वतन से भेज दिये हैं यही कारण है कि ब्रह्मसृष्टियों की आत्मिक नजर परमधाम की ओर से कभी बन्द नहीं होती। प्रेम परमधाम से उतरी हुई आत्माओं का सहज स्वभाव है क्योंकि इन्हीं के द्वारा अखण्ड प्रेम इस संसार में जाहेर होगा।

परमधाम में भी सेवा होती है परन्तु इस नासूत की ज़िमी जैसी तन–मन–धन की सेवा नहीं होती। वहाँ की सेवा में से वहदत, निस्बत तथा इश्क की सुगन्ध आती है क्योंकि वहाँ का जड़ कहलाने वाला तत्त्व भी चेतन है इसलिए वहदत तथा निसबत के सम्बन्ध से सभी को आनन्द प्रदान करने में ही स्वयं को सार्थक मानता है। प्रेम प्रेम का राग तो समस्त संसार अलाप रहा है, परन्तु प्रेम की पहचान यहाँ किसी को भी नहीं

शेष पृष्ठ 16 पर.....

हबसे का पातशाह

अंजील तौरेत और कुरान, इन पर होए आया फुरमान।

जो हबसे का पातशाह, पाई इन किताबों से राह।। ब0 क0 3/13

कुरान में हबसा उस जेल को कहा गया है। जिसमें श्री प्राणनाथ जी नज़रबन्द थे,तब रास ग्रन्थ और कलस ग्रन्थ की दो चौपाइयाँ उतरी थीं। वहाँ से दीन की रोशनी बढ़ती गई। इसीलिये श्री प्राणनाथ जी को हबसे का बादशाह कहा गया है। रास, कलस और सनन्ध ग्रन्थ में श्री मुख वाणी को जाहेर करने का हुक्म श्री राज जी महाराज ने श्री इन्द्रावती जी को दिया। इसीलिये इन ग्रन्थों के कलामों के द्वारा ही श्री परमधाम पहुँचने का सत्य मार्ग हम मोमिनों को प्राप्त होना है। इन किताबों की चर्चा सुनने की चाहना मोमिनों के दिल में सदैव बनी रहती है।प्रतिदिन सिनगार आरती में उनकी शोभा तेज और प्रकाश का दर्शन इस प्रकार है :–

रास रसिक अति सुंदर जीरे पूरण पुंज प्रकास कलस।

सनंधनी वाणी लाई ने, तिमर कीधं सर्वे नास।। सुन्दर वरनी आरती ।।4

इस प्रकार कलस और सनन्ध की वाणी वचन जीव की अज्ञानता को समाप्त कर देते है और मोमिन अपना तन, मन, जीवन अपने प्राणनाथ धनी पर समर्पित करके उनके सुंदर स्वरूप को अपने दिल में बसा लेते हैं। इन सच्चे मोमिनों के दिल को ही खुदा का अर्श कहा गया है और वही खुदा के अत्यन्त प्यारे आशिक कहे जाते हैं। वे इस संसार में इश्क और ईमान की अच्छी रहनी से चल कर खुदा के अत्यन्त करीब रहते हैं।

आज दिन तक इस संसार में भागवत्, कुरान, पुराण और बाइबिल के रूप में केवल हकीकत का ज्ञान था। मारफत और कयामत के संकेत तो ग्रन्थों में थे परन्तु उन संकेतों के स्पष्ट अर्थ न होने के कारण संसार चरम आनन्द की स्थिति से अनभिज्ञ था। प्राणनाथ जी ने उस दुर्लभ ज्ञान के श्री कुलजम स्वरूप साहेब जी में वर्णित करके आत्मा को उसके मूल पारब्रह्म के साथ एक रस करके पारब्रह्म के विषय में सारी अटकलों और संशयों को समाप्त करके पारब्रह्म अक्षरातीत की शोभा को प्राप्त कर लिया। इस नश्वर खेल में जागनी के तीसरे ब्रह्माण्ड में ब्रह्मआत्माओं ने खुदा के छिपे श्री प्राणनाथ जी के रूप में देखा। श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक इमाम मेंहदी साहेब का ऊपर का स्वरूप पाँच तत्व का है। श्री कुलजम स्वरूप की वाणी से देखने में यह साक्षात् मूल स्वरूप श्री राज जी महाराज हैं। इन्होंने ही श्री कुलजम स्वरूप की वाणी को अपने मुखारविंद से फुरमाया है। ये मोमिन श्री प्राणनाथ जी की वाणी की हिदायतों के अनुरूप ही चलतें हैं। आखिर के समय में मोमिनों को मिलने वाली नेकी के लिये यह कभी श्री प्राणनाथ जी का साथ नही छोड़ते।

सब्द न छोड़े ए महंमद, वास्ते फानी दुनिया रद।

वास्ते नेकी आखिरत, कबूं न छोड़े खास उमत।।

बड़ा कयामत नामा प्रकरण 3/15

लोक व्यवहार, मान मर्यादा कर्ज के समान दुनिया के ऊपर लदी हुई है। जागृत बुद्धि के द्वारा जैसे जैसे हद, बेहद और उससे परे परमधाम के लीला, स्वरूप और धाम की जानकारी प्राप्त हाती जाती है और आत्मा के प्रियतम के साथ जैसे जैसे निसबत जुड़ती जाती है। यहीं बैठे बैठे ही जीव को बहिश्त का सुख और आत्मा को संसार मे रह कर परमधाम के आठों सागरों का सुख यहीं

प्राप्त होता है। तब मोमिनों के अपने धनी की इश्क और साहिबी का ज्ञान होता है जो परमधाम में रहते हुए कदाचित नहीं था। श्री प्राणनाथ जी ने काजी बन कर कयामत का बिगुल बजा दिया और जीव को आवागमन से मुक्ति प्रदान करके कायमी का अनमोल तोहफा प्रदान किया। आत्माओं को अपनी पनाह में लेकर परमधाम के पच्चीस पक्षों का आनन्द प्रदान किया।

अदा हुए सब फरज, तब सिर से छूटया करज।

खुसालियाँ इनों होसी धनी, मिस्त्र खजाना पाया अपनी।।ब0 क प्रकरण 3/16

यह तो इमाम मेंहदी श्री प्राणनाथ जी की कृपा से कयामत के दिन का पता चला। इस बात को संसार वाले कभी भी न समझ पातें कि कयातम कब होगी। कुरान के तीसवें आम सिपारे में श्री राज जी महाराज के पाँच स्वरूपों का मिलना इमाम मेंहदी श्री प्राणनाथ जी के अन्दर इकट्ठे होना लिखा है। ये पाँच स्वरूप हैं – ब्रज, रास, मुहम्मद साहिब, श्री श्यामा महारानी और हकी स्वरूप श्री प्राणनाथ जी महाराज।

पुरसिस का दिन साहेब देखावे, कयामत कौल दूजा कोई न पावें।

पांच सूरत लिखी आम सिपारे, ए समझे पाक दिल उजियारे।।

ए पांचो नेक अमल जो करें, सो भिस्ती फुरमान से ना टरें।

और झूठा काम बद फैली करे, सो दोजख की आग में परें।।ब0 क0 प्रकरण 23/2, 3

अर्थात् जो इन पाँचो के बतलाये अर्थात् श्री प्राणनाथ जी के निजानन्द सम्प्रदाय की राह पर रहनी से ईमानदारी से चलेंगें वही ब्रह्मसृष्टि और ईश्वरीसृष्टि अखण्ड धामों की रहने वाली है। दुनिया वाले झूठे काम और बदचलनी से जीवन व्यतीत करते हैं, वे सब पश्चाताप की अग्नि में जलेंगें। श्री प्राणनाथ जी के चरणों में समर्पित होने पर पता चलेगा कि कयामत के दिन की पहचान हमें किसने कराई ?कुलजम स्वरूप की वाणी से दुनिया के जीवों को अखण्ड मुक्ति प्रदान करके बहिश्तों में शोभा, खेल में रूहों को श्री प्राणनाथ जी ने दी है। कयामत के दिन कोई भी किसी को लान नहीं दे सकेगा और न ही दुःख सुख में मददगार बन सकेगा। तब किसी की भी इलम और चतुराई नहीं चलेगी। कर्मों के हिसाब से सबको न्याय मिलेगा।

तित पहुँच के सुध दई तुमें किन, बुजरकी दई इत इन।

निहायत इस रोज की कोई न पावे, ए पातसाह पुरसिसका देखावे।।

किनको नफा न देवे कोए, तब कोई नफा न किसी के दाखिल होए।

कूवत तिन समें कहुएं जाए, तो कोई नफा किसीको न सके पोहोंचाए।। ब0 क0 प्रकरण 23/6, 7

श्री राजजी महाराज ने कुरान में जो फुरमाया था, इसके रहस्यों को श्री प्राणनाथ जी महाराज ने कुलजम स्वरूप की वाणी में खोल दिया है। उससे परब्रह्म अक्षरातीत धाम धनी, परमधाम और मोमिनों की पहचान हो गई है।

प्रगटे ब्रह्म और ब्रह्मसृष्टि, और ब्रह्म वतन।

श्री महामत इन प्रकाश थें, अखण्ड किए सब जन।। किरन्तन प्रकरण 57/10

अब यह जाहेर हो गया है कि मोमिनों का तीर्थ स्थान (हज) परमधाम है और रोजा (व्रत) दुनिया को छोड कर स्वयं को श्री राज जी के चरणों में समर्पित करना। श्री प्राणनाथ जी ने यह सभी बातें छत्रसाल जी महाराज को समझाईं और परमधाम के बारह हजार मोमिनों का सिरदार 'अमीरूल मोमिन' बनाया। इसके साथ साथ मोमिनों की जागनी शुरू हुई। श्री प्राणनाथ जी विजयाभिनन्द बुद्धनिष्कलंक अवतार, आखरूल जमा इमाम मेंहदी साहेब जाहिर हुए। सभी सरदार साकुण्डल, साकुमार ब्रह्मसृष्टि ईश्वरी सुष्टि संसार में प्रगट हुए। परमधाम की समस्त न्यामतें श्री राज जी महाराज ने मोमिनों को दीं।

ए अग्यारही बीच बड़ो विस्तार, प्रगटे

बिलन्द सब सिरदार।

सब न्यामतें सिफतें दई सितार, उतरियां आयतें जो उस्तवार।। ब0 क0 प्रकरण 24/2

इस प्रकार श्री कुलजम स्वरूप की वाणी के अवतरण से परमधाम की न्यामतें संसार में आ गईं, अज्ञानता का अन्धकार समाप्त हो गया और ज्ञान रूपी सूर्य उदय हो गया। परिणाम स्वरूप आत्मा शरीर रूपी पिंजरे में रह कर भी स्वच्छंद विचरण करते हुए परमधाम के मोहोलों, मन्दिरों, बागों, पर्वतों और सागरों में होने वाली लीलाओं का सुख मन और जीव को प्रदान करती है। श्री राज जी की मेहेर से उनकी निसबत से हुक्म से श्री राज जी के दिल का दरवाजा खुल गया है और मोमिन अपनी सुरता से खिलवत में धाम के धनी को प्रणाम करके अरजी करतें हैं– श्री जुगल स्वरूप सिंहासन के ऊपर विराजमान हैं, आपन सब सखियाँ श्री राजजी के चरणों तले भराए के बैठी हैं, ऊपर नूर को चन्द्रवा झलकत हैं, फिरते फिरते चौसठ थंभ नूर के झल्कत हैं। तहाँ श्री राज जी के चरणों तले खड़े होए के अर्ज विनती कीजिए कि साहेब मेंरे ! तुमही जो करी सो भई और करत हो सो होत है और करोगे सो होऐगी–––––– श्री जी साहेब जी को प्रणाम। श्री बाई जी साहेबजी को प्रणाम। श्री महाराजा जी को प्रणाम। श्री लालदास जी को प्रणाम । श्री समस्त सुन्दरसाथ को प्रणाम।

इस प्रकार से श्री राज जी महाराज की अपार मेहेर से ही मोमिनों ने इस खेल को देखा। अब मेहेर से ही उनके चरणों तले आ गये। मेहेर से ही अखण्ड मुक्ति प्राप्त कर हँसते हुए श्री राजजी से मिले।

मेहेर खेल देख्या मोमिनों, मेहेरे आए तले कदम।

मेहेरे कयामत करके,मेहेरें हंसके मिले खसम।। सागर प्रकरण 15/36

प्रणाम जी

नीरू खुराना

प्रेम ही जीवन है।

प्यारे सुन्दरसाथ जी हमारा प्यार भरा प्रणाम जी!

मनुष्य जिससे प्रेम करता है अपने अस्तित्व को उसके साथ जोड़ देता है। सच्चे प्रेम की पहचान यही है कि बीच का अन्तर मिट जाए, सोच, चरित्र और कर्म एकाकार हो जाए। प्रेम में चेतना प्रत्यक्ष रूप से उसके पक्ष में खड़ी हो जाती है जिससे प्रेम किया जाता है। एक आत्मा अपनी सम्पूर्ण क्रियाशील चेतना के साथ परमात्मा के पक्ष में खड़ी नजर आती है यह पक्ष कोई समर्थन नहीं और परमात्मा को किसी समर्थन की इच्छा भी नहीं क्योंकि वह इन सबसे ऊपर है, परे है।यह पक्ष है उससे जुड़ना उसकी शरण में जाना, उसे सर्वस्व अर्पण कर देना। अन्य किसी भी प्रेम में मनुष्य जुड़ता है, समर्पण करता है किन्तु शरणागत नहीं होता। शरणागत मात्र प्रेम यदि पूर्ण परमात्मा से हो तो ही उससे जुड़ा जा सकता है। पूर्ण परमात्मा से प्रेम की अवस्था ही महानतम् अवस्था है जो चिरंजीव है, कामी पुरूष की रूप सौंदर्य के प्रति आसक्ति की कितनी ही कथाएं हैं। भूखे के लिए भोजन सबसे महत्व का हो जाता है। लोभी को सदैव धन की ही आस लगी रहती है और कुद्द नहीं सूझजा जब नेत्रों में निद्रा व्याप्त हो तो शय्या से बड़ा सुख नहीं, जिसमें पूरी रात व्यतीत हो जाती है। सुन्दर सपनों में मनुष्य आनंद विलास कापान करता है। ये सारी ही स्थितियाँ सुख प्रदान करने वाली हैं किन्तु जो प्रीति परमात्मा से होती है उसके सुख और आनंद का वर्णन ही नहीं किया जा सकता। जितने भी अन्य तरह के प्रेम हैं उसमें सुख और आनंद तो है किन्तु दुःख और निराशा के योग भी बनतें है। भोजन कष्टदायक भी बन जाता है, धन समस्याएं भी उत्पन्न करता है, निद्रा व्यथित भी कर सकती है आप टी0वी तो देखते होंगें उसमें शाहजहाँ के महल के बारे में कितना दिखति हैं

और कहते भी हैं कि शाहजहां के पास इतनी धन दौलत थी कि सारी दुनिया को खरीद सकता था लेकिन शाहजहाँ का अन्त इतना गन्दा था कि सुनने पर रूह काँप उठती है शाहजहाँ ने खुद कहा था कि धन मनुष्य को कुछ समय के लिए सुख तो दे सकता है लेकिन दुख उससे भी ज्यादा। ये शाहजहाँ के अन्त समय के बोल थे इसलिए कहा है पूर्ण परमात्मा का प्रेम ही ऐसा है जो सदैव सुख और संतुष्टिदायक है। भाई गुरूदास जी और विस्तार में जाते हुए कहते हैं कि व्यापार में कभी लाभ, कभी हानि हाती हैं, कृषि में फसल कभी अच्छी होती है और कभी सूख भी जाती है। किसी की चाकरी में दुख भी सहने पड़ सकते हैं। राज्य करने वाले और वन में जाकर तपस्या करने वाले दोनों को ही वह फल नहीं प्राप्त होता, जिसकी भी आशा करते हैं अर्थात् वे आवागमन से मुक्त नहीं होते। लाभ के साथ हानि जुड़ी हुई है किन्तु सच्ची आत्मा को परमात्मा से प्रेम में लाभ ही लाभ होता है, वहाँ हानि की कोई संभावना नहीं होती। यह प्रेम सभी अभावों से मुक्त और उत्कृष्ट है। सच्ची आत्मा यह जानती है। इसलिए अपना सब कुछ परमात्मा को ही मानती है।सांसारिकता न तो उसे लुभा पाती है न ही वह उसमें अपना कोई हित देखती है, इस संसार में बहुत से लोग अपने मित्रों, पुत्र, भाई के सहारे जीवन जीना चाहते हैं। बहुत से अन्य व्यक्ति अपने भिन्न सम्बंधियों का गुमान करके जीवन में आधार ढूढते हैं। ऐसे भी हैं जो बलशाली और बड़े ओहदेदारों से सम्बन्ध में अपना हित देखते हैं एक सच्ची आत्मा को अपना हित परमात्मा में दिखाई देता है। ऐसे ही हम अपनी सच्ची आत्मा से उस परमात्मा को प्रेम करते हैं तो हमें अपने पति परमात्मा की यही आवाज आती है कि हे मेरी आत्मा तेरे नाम के बिना तो मैं भी अधूरा हूँ क्योंकि तेरी आत्मा से ही मेरा नाम तभी पूरा होता है (परम+आत्मा) यानी ''परमात्मा'' अगर हम अपने खसम से प्यार करते हैं तो वो भी हमें उतना ही प्यार हमें देते हैं। इसलिए वह अपनी समस्त आशाओं के लिए परमात्मा के पास ही जाती है। वह पूर्ण परमात्मा पर ही अपनी क्रियाशील चेतना को टिका देती है इसका सहज उत्तर भी गुरूवाणी देती हैः–

जिन्ह सिउ धड़े करहि से जाहि, झुठु धड़े करि पछो ताहि।।1

थिर न रहहि मनि खोटु कमाहि ,हम हर सिउ धड़ा कोआ जिस का कोई समरथु नाहि।।2 पन्ना 633 गुरूवाणी

एक सभि धड़े माइआ मोह पसारी, माइआ कउ लूझहि गावारी।

जन्म मरहि जुहे बाजी हारी, हमरै हरि धड़ा जि हलत पलत सभ सवारी।।

सांसारिक सम्बंधो और पदार्थों से प्रेम कर पछताना पड़ता है क्योंकि वे सब चलायमान हैं, अस्थिर हैं। ऐसे आधार अंततः झुठे सिद्ध हाते हैं। इनसे मन अपने पति परमात्मा के मार्ग से विचलित होता है अपने पति जैसा जीवन आधार अन्य कोई नहीं है। सभी सांसारिक सम्बंध और पदार्थ माया के भ्रम हैं, जिनमें उलझकर मनुष्य अपने जीवन को व्यर्थ करता है। परमात्मा को जीवन का आधार बनाना वर्तमान और भविष्य दोनों को संवार देता है। जीवन आनंदमय हो जाता है। सच्ची रूह वही है जो अपने प्रीतम को अपना सब कुछ मानकर अपने मन में बसा लेती है। जिससे उसमें सदैव आनंद व्याप्त रहता है। उसके भ्रम मिट जाते हैं, सच की राह दिखने लगती है और उसे सारे सुख प्राप्त हो जाते हैं। उसे सच दिखने लगता है कि प्रीतम के बिना कुछ भी अधिक समय तक साथ रहने वाला नहीं। गुरूवाणी भी कहती है।

ना भौण भरजाईआ ना इसे ससुहीआह।

सचा साक न तुटई गुरू मेले सहीआह।।

उपरोक्त अनमोल वचन गुरू नानक सहिब के हैं जिसमें उन्होंने परमात्मा से सच्ची आत्मा के सम्बंध को सच्चे सम्बंध की संज्ञा दी है। बहन, भाभी, सास आदि सारे सम्बंध टूट जाने वाले है प्रीतम से जुड़ा हुआ सम्बंध कभी भी नहीं टूटता। सम्बंधो का पूरा काफिला सामने दिखता है।कितने ही सम्बंध हाते हैं फूफी, नानी, मासी, देवरानी, जेठानी,

मामा, मामी, भाई, माता, पिता जैसे सम्बंधो की भरमार के मध्य मनोहर और स्थिर सम्बंध परमात्मा का ही है जो कभी वियोग नहीं होने देता। परमात्मा से सम्बंध को सच्चा और सदा साथ रहने वाला कभी वियोग ना देने वाला इसलिए कहा गया है क्योंकि यह सम्बन्ध परमात्मा की शरण में लाकर उसकी कृपा प्राप्त करने से ही बनता है। शेष सारे सम्बंध या तो जन्म से हाते हैं या लेन देन के होते हैं। इस सम्बंध में परमात्मा ही सच्ची आत्मा के मन में प्रेम की ज्योति जलाता है उसे राह दिखाता है, असत् से बचाता है।

सच्ची आत्मा सांसारिकता को दर किनार कर परमात्मा को अपनी चेतना का आधार बना लेती है तो उसे ही याचना करती है कि मन में जगा प्रेम का रस सदा बना रहे और रसना पर सदैव परमात्मा का गुणगान रहे। मनुष्य जानता भी है कि वह इस संसार में सांसारिक सम्बंधों और पदार्थों से आनंद रस की तलाश करने नहीं आया हैं उसका जीवन परमात्मा से सम्बंध जोड़ने में है।

नाम धारीक झुठे सभि साक।
काहे कउ मूरख भखलाइआ।।
मिल संयोगी हुकम तू आरआ।।

मनुष्य को परमात्मा का सच्चा सम्बंध भ्रम से बचाता है। परमात्मा सदा उसका सहायक बनकर खड़ा रहता है। और उसके मान को बनाये रखता है।सच्ची आत्मा और परमात्मा के प्रेम सम्बंध में आत्मा सदैव दीन याचक बनी रहती है। वह कभी भी अपने मन मे इस प्रेम सम्बंध का अहम् नहीं उत्पन्न होने देती और इस सम्बंध को बने रहने से अधिक की कामना नही रखती। आत्मा की दृष्टि में कोई सांसारिक रिश्ते सम्बंध अथवा व्यवहार नहीं। उसका कोइ सांसारिक संरक्षक, मित्र, सहायक नहीं है। वह गुणों से विहीन है उसमें न तो कोई ज्ञान है न कोई कला, कौशल अथवा सामर्थ्य है। बस उस आत्मा को इतना ज्ञान है कि उसका पति परमात्मा की शरण में जाने से उसका उद्धार हो सकता है अन्य किसी के साहयोग, आश्रय में कोई बल नहीं है जिससे उसका हित हो सके। ज्ञान का यह एक सूत्र ही आत्माके जीवन को परिष्कृत करके उसे अपने पति परमात्मा की कृपा और प्रेम का पात्र बनाकर उस शिखर पर सहज ही ले जाता है। जिसके निकट बड़े बड़े यती तपस्वी साधक भी नहीं पहुँच पाते। एक सच्ची आत्मा ही प्रेम में डूबकर वो सब पा लेती है जो युगों–युगों की साधना से बड़े बड़े साधन भी नहीं प्राप्त कर पाते। कुलजम स्वरूप ही एक ऐसा ग्रन्थ है जो एक ही खसम की पहचान करवाता है और यह विलक्षणता उस पूरे विश्व में एक निराली चमक प्रदान करती है। गुरूवाणी में लिखा है–

गये कलेस रोग सभि नासे प्रभ अपने किरपा धारी।

आठ पहर आरधहु सुआमी पूरन घाल हमारी हरि जीउ तू सुख संपति रासि।।

राख लैहु भाई मेरे कए प्रभ आगै अरदास हमारी जो मागउ सोई सोई पावउ अपने खसम भरेसा कहु नानक गुरू पूरा भेटिओ मिटिओं सगल आदेसा।।

ऐसा और कोई सम्बंध नहीं है जिससे जो कुछ मांगा जाए सब कुछ मिल जाए। आत्मा और परमात्मा का प्रेम सम्बंध एक ऐसे दृढ़ विश्वास को जन्म देता है कि आत्मा जो कुछ अपने पति परमात्मा से माँगती है उसे मिल जाता है पति परमात्मा उसे अपनी कृपा से निहाल कर देते हैं। एक सच्ची आत्मा अपने पति से क्या माँगेगी कि मुझे तू मुझे मिल जा मुझे दूनियां का सब कुछ मिल गया। प्यारे सुन्दरसाथ जी समय बहुत थोड़ा है अपना जीवन यूँ ही व्यर्थ ना कीजीए।

रात गवाई सोए के दिवस गवाया खाये।
हीरा जनम अनमोल है, कोठी बदले जाए।।

प्रणाम जी

Gunwant kaur(rani)
buria (yamunagar)।

बिना विचारे रहत है, तुमपों हक इलम।
ए सहुर रूहें पोहोचही, तब ही उड़े तिलसम।।
जाग्रत शब्द धनीय के, ततखिन करें मकसूद।
सोई शब्द लियें बिना, होए जात नाबूद।।

अक्षरातीत पूर्णब्रह्म परमात्मा स्वयं महामति के धाम हृदय में विराजमान होकर उनके श्री मुख से अमृतमयी जागृत ब्रह्मवाणी का प्रकटन करवा रहे हैं। जो कुलजम स्वरूप ग्रंथ में संग्रहीत है उसे स्वसं वेद भी कहतें हैं। इसकी हर चौपाई रूपी गागर में तारतम ज्ञान रूपी सागर भरा हुआ है जिससे इसे तारतम वाणी भी कहतें हैं। किन्तु इस वाणी को जिसे हक का इलम भी कहतें हैं सुन्दरसाथ अपने मस्तिष्क के बातायन पर रख लेते हैं। यह वहाँ वैसे ही है जैसे बीज ऊसर भूमि में पड़ा हो। कभी भी अंकुरित नहीं हो सकता है। मनुष्य का मस्तिष्क बुद्धि का केन्द्र शुष्क रहता है इसमें द्वैत–द्वैत से द्वन्द, तर्क–वितर्क ही पैदा होते हैं। इसलिये इस स्तर पर तो इमान भी नहीं ठहरता। फिर आत्मिक जागृति कैसे हो ?जब तक यह ज्ञान मस्तिष्क से नीचे हृदय केन्द्र पर नहीं आता तब तक उसे जागनी ब्रह्माण्ड की अवोहवा जैसे बीज को नम भूमि की आवश्यकता होती है, नही मिल सकती इसलिये आज सुन्दरसाथ की जनसंख्या लाखो में हो गई है किन्तु आत्मा जागृति सैकडों में ही नहीं हो पाई है। इसलिये महामति जी ने कहा है कि इसका तारतम वाणी के ज्ञान का सहुर–समझ या विवेक आत्मा तक पहुँच जाये तो तुरन्त सारा तिलस्म मायावी खेल का पसारा उड़जावेगा।

महामति श्री प्राणनाथ जी की पूरी वाणी मात्र इशारा सांकेतिक भाषा में है इसे समझने के लिये एक समर्पण और एक संकल्प है। ये दो मार्ग हैं। किन्तु संकल्प व समर्पण जहाँ से घटित होते हैं वह जीवन ऊर्जा का केन्द्र नाभि का है। क्योंकि मनुष्य जन्म के पूर्व शिशु अवस्था में माँ के पेट में नाभि से जुड़ा होता है। इसलिये मनुष्य के शरीर में प्राणों की जड़े नाभि में होती हैं जो अदृश्य हैं। हामारी शिक्षा–दीक्षा सभ्यता संस्कृति व सामाज ने हमारे मस्तिष्क का विकास किया है जो मनुष्य को अपने मूल पर लौटने में बाधक हो गया है।

बालक जन्म के बाद माँ के स्तन से लगता है तब उसका कुछ हृदय का विकास होता है किन्तु नाभि केन्द्र का विकास रूक जाता है। फिर उसका शिक्षा दीक्षा से, उसके उपयोगितावादी दृष्टिकोण के कारण समाज उसके मस्तिष्क के विकास में सहयोग करता है। इसमें हृदय का विकास भी रूक जाता है। यहाँ तक कि वह संवेदना शून्य हो जाता है। जीवन में जो भी श्रेष्ठ है जो भी उपलब्ध करने जैसा है उसका मार्ग शरीर के भीतर से आता है। इसलिये शरीर के प्रति भाव दशा सम्यक ठीक, संतुलित होना चाहिये।

हृदय के तार थोड़े कसे हों ओर मस्तिष्क के तार ढीले हों तो प्रेम पैदा होने की सम्भावना बनती है। विवेक पैदा हो सकता है। हृदय के तारों में कसाव और मस्तिष्क तारों मे शिथिलता पैदा करने की प्रक्रिया का नाम ध्यान है और इसकी गहराई में पहुँचने पर ही नाभि केन्द्र पर पहुँचा जाता है जिसके नीचे आत्मा हैं। यहाँ तक तारतम ज्ञान पहुँचने पर ही जीवन की समग्रऊर्जा सक्रिय हाकर संकल्प व समर्पण घटित होने की स्थिति में आ जाती है। मनुष्य की आत्मा न हृदय से जुड़ी है न मस्तिष्क से वह नाभि से

जुड़ी से है। इसलिए वह सर्वाधिक महत्व पूर्ण बिंदु है। इसलिये जब भी कोई दुर्घटना घटती है जो प्राणघातक होती है। तो तत्काल हमारी नाभि पर प्रभाव पड़ता हैं। रात्रि में हमारी श्वास नाभि से चलती है, छोटे बच्चों की श्वास हमेशा नाभि से चलती है।इसलिये इस नाभि केन्द्र का महत्वपूर्ण स्थान है।

जब हम मस्तिष्क से ध्यान करते हैं तभी हृदय में प्रवेश कर जाते हैं और हृदय से ध्यान हटाकर गहरें नाभि केन्द्र पर पहुँचते हैं। महामति श्री प्राणनाथ जी का जो पूरा शरीर तदांगित होने की बात वाणी में कही है वह इसी केन्द्र से तरंगित होता है। इस केन्द्र पर पहुँचे बिना समग्र जीवन ऊर्जा कम्पायमान होकर जग जाती है। संकल्प व समर्पण में अहंकार विलीन हो जाता है। बिना इस केन्द्र के सक्रिय हुए समपर्ण भी घटित नहीं हो सकता है।

महामति श्री प्राणनाथ जी की वाणी के शाब्दिक अर्थों में हम उलझ जाते हैं। उनके इशारे व परिणाम की ओर ध्याान नहीं देते। जैसे किसी झील में चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब बनता हो तो उस प्रतिबिम्ब को पकड़ने की हम सुन्दरसाथ निरर्थक कोसिश में लग जाते है। ये प्रतिबिम्ब कहाँ का है इस पर विचार नही करतें हैं। दिशा की ओर यात्रा करने का निर्देश देती है। इसी तरह वाणी के शब्दों में उलझर एक नई सरियत कर्मकाण्ड की परम्परा चालू कर रखी है।

घर ही में न्यारे रहिये कीजें अन्तर में बास।

इस चौपाई में सीधा प्रकृति मंडल को छोड़कर आत्मा सुराता में रमे रहने का निर्देश दिया गया है किन्तु हम हैं कि मस्तिष्क से नीचे उतरने का नाम ही नहीं लेते हैं।

निज घर पीऊ का लिजिये प्रकाश, ज्यों वृथाँन जायें एक स्वास।

इन चौपाईयों का अर्थ सहूर करने के लिये केवल बुद्धि केन्द्र से ही नहीं, हृदय केन्द्र के नीचे नाभि केन्द्र पर उतरना होगा। जिस प्रकार सौ डिग्री पर उबलने पर पानी भाप बनता है यदि हम पूरे नहीं उबलतें अर्थात् पूरी जीवन ऊर्जा को अपने नाभि जीवन केन्द्र से आन्दोलित नहीं किया तो कुछ भी परिणाम निकलने वाला नहीं है। यह भूल महामति जी के समय से ही होती आई है ओर इसी भूल को परम्परा बनाये इसे अभी भी विकसित किये जा रहे हैं। वाणी में कहा है–

कैयो खोया जनम अपना, रहे धनी के जमाने माहें।

हाय हाय कहा कहूं मैं तिनको, जो इनमें से निश्फल जाए।।

अनेकों सुन्दरसाथ श्री जी के साथ में रहे किन्तु धनी के प्रेम (युगल स्वरूप के दिल में बसाने) से कोसों दूर रहे। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि उन्होने अपना मानव तन व्यर्थ में ही खो दिया। हाय! हाय! मैं उन हतभाग्य सुन्दरसाथ के विषय में क्या कहूँ ?जो श्री जी (धाम धनी) के साथ रहकर भी उस अखंड आनंद को न ले सके।

श्री महामति जी इसलिये बार बार आग्रह करते हुये सुन्दरसाथ से कह रहे हैं कि

सुनो साथ जी सिरदारों, ए कीजो वचन विचार।

देखो बाहेर माहें अन्तर, लीजों सार को सार जो सार।।

महामति जी कहते हैं कि हे सरदार सुन्दरसाथ जी ! मेरे इन वचनों का जाग्रत बुद्धि से विचार कीजिए। आप अपने अन्दर बाहर एवं उससे परे अखण्ड परमधाम को आत्मिक ज्ञान की दृष्टि से देखिए और इन सबके सार रूप तारतम उसके भी सार जागनी एवं उसके भी सार धनी के स्वरूप की पहचान कीजिए।तभी परमधाम की न्यामतें इश्क ईमान इलम आदि की उपलब्धि हो विरह–वेदना सें में गुजरकर आत्मा निर्मल, सहज, सरल होकर अपने–अपने निर्मल स्वरूप को उपलब्ध हो हकीकत से मारिफत की स्थिति को उपलब्ध हो सकेगी।

स्वामी कृष्ण सिद्धार्थ
प्राणनाथ ज्ञानपीठ
सरसावा

क्या आपके पास देश के लिए 20 मिनट हैं ?

पीछले अंक से आगे.....

Indain education act- 1858 में **Indain education act** बनाया गया। इसकी ड्राफ्टिंग लॉर्ड मैकोले ने की थी। लकिन उसके पहले उसने यहाँ भारत की शिक्षा व्यवस्था का सर्वेक्षण कराया था उसके पहले भी कई अंग्रेजो ने भारत की शिक्षा व्यवस्था के बारे में अपनी रिपोर्ट दी थी। अंग्रेजों का एक अधिकरी था G w litnar और दूसरा Thomas munro दोनों ने अलग अलग इलाकों का अलग अलग समय सर्वे किया था। 1823 के आसपास की बात है ये litnar जिसने उत्तर भारत का सर्वे किया था उसने लिखा है कि यहाँ 97 प्रतिशत साक्षरता है और Munro जिसने दक्षिण भारत का सर्वे किया था, उसने लिखा था कि यहाँ तो 100 प्रतिशत साक्षरता है और उस समय जब भारत में इतनी साक्षरता है। और मैकोले का स्पष्ट कहना था कि भारत को हमेशा हमेशा के लिए अगर गुलाम करना होगा तो इसकी देशी संस्कृति शिक्षा व्यवस्था को पूरी तरह से ध्वस्त करना होगा और उसकी जगह अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था लानी होगी और तभी इस देश में शरीर से हिन्दुस्तानी लेकिन दिमाग से अंग्रेज पैदा होगें और जब इस देश की यूनिवर्सिटी से निकलेंगे तो हमारे हित में काम करेंगे, और मैकोले एक मुहावरा इस्तेमाल कर रहा है कि जैसे किसी खेत में कोई फसल लगाने के पहले पूरी तरह जोत दिया जाता है वैसे ही इसे जोतना होगा और अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था लानी होगी। इसलिए उसने सबसे पहले गुरूकुलों को गैराकानूनी घोषित किया, जब गुरूकुल गैराकानूनी हो गाए तो उनको मिलने वाली सहायता जो समाज के तरफ से होती थी वो गैरकानूनी हो गयी फिर संस्कृत को गैरकानूनी घोषित किया और इस देश के गुरूकुलों को घूम घूम कर खत्म कर दिया उनमें आग लगा दी, उसमें पढ़ाने वाले गुरूओं को उसने मारा पीटा जेल में डाला। 1850 तक इस देश में 7 लाख 32 हजार गुरूकुल हुआ करतें थे और उस समय इस देश में गाँव थे 7 लाख 50 हजार मतलब हर गाँव में औसतन एक गुरूकुल और ये जो गुरूकुल होते थे वो सब के सब आज की भाषा में higher learning institute हुआ करते थें। उन सबमें 18 विषय पढ़ाये जाते थे और ये गुरूकुल समाज के लोग मिलकर चलाते थे न कि राजा महाराजा और इन गुरूकुलों में शिक्षा निशुल्क दी जाती थी। इस तरह से सारे गुरूकुलों को खत्म किया गया और फिर अंग्रजी शिक्षा को कानूनी घोषित किया गया और कलकत्ता में पहला कान्वेंट स्कूल खोला गया उस समय इसे फ्री स्कूल कहा जाता था। इसी कानून के तहत भारत में कलकत्ता यूनिवर्सिटी बनाई गयी, बम्बई यूनिवर्सिटी बनाई गई और मद्रास यूनिवर्सिटी बनायी गयी, ये तीनों गुलामी के जमाने की यूनिवर्सिटी

आज भी इस देश में हैं। और मैकोले ने अपने पिता को एक चिट्ठी लिखी थी। बहुत मशहूर चिठ्ठी है –

वो उसमें लिखता है कि इन कॉन्वेंट स्कूलों से ऐसे बच्चें निकलेंगे जो देखने में तो भारतीय होंगे लेकिन दिमाग से अंग्रेजी होंगे इन्हें अपने देश के बारे में कुछ पता नहीं होगा इनको अपनी संस्कृति के बारे में कुछ पता नहीं होगा इनको अपनी परम्पराओं के बारे में कुछ पता नहीं होगा, इनको अपने मुहावरे नहीं मालूम होंगे तब ऐसे बच्चे होंगे इस देश में तो अंग्रेज भले ही चले जाए इस देश से अंग्रेजियत नहीं जाएगी।।

और उस समय लिखी चिठ्ठी की सच्चाई इस देश में अब साफ साफ दिखाई दे रही है। और उस एक्ट की महिमा देखियें कि हमें अपनी भाषा बोलने में शर्म आती है, अंग्रेजी में बोलते हैं कि दूसरों पर रोब पड़ेगा अरे हम तो खुद में हीन हो गए हैं जिसे अपनी भाषा बोलने में शर्म आ रही है, दूसरों पर क्या रोब पड़ेगा। लोगों के तर्क हैं कि अंग्रेजी अंतराष्ट्रीय भाषा है दुनिया में 204 देश हैं और अंग्रेजी सिर्फ 11 देशों मे बोली, पढ़ी और समझी जाती है। फिर ये कैसे अंतराष्ट्रीय भाषा हैं शब्दों के मामले में भी अंग्रेजी समृद्ध नहीं, दरिद्र भाषा है। इन अंग्रजों की ना बाइबल है, वो भी अंग्रजी में नहीं थी और ईसा मसीह अंग्रजी नही बोलते थे। इसा मसीह की भाषा और बाइबल की भाषा अरमेक थी। अरमेक भाषा की लिपि जो थी वो हमारे बंगला भाषा में मिलती जुलती थी। समय के कालचक्र में वो भाषा विलुप्त हो गयी। संयुक्त राष्ट संघ जो अमेरिका में है वहाँ की भाषा अंग्रेजी नही होती है वहां का सारा काम फ्रेंच में होता है। जो समाज अपनी मातृभाषा से कट जाता है उसका कभी भला नहीं होता और यही मैकोले की रणनीति थी।

Indian police act- 1860 में इंडियन पुलिस एक्ट बनाया गया। 1857 के पहले अंग्रेजों की कोई पुलिस नहीं थी। इस देश में लेकिन 1857 में जो विद्रोह हुआ उससे डरकर उन्होनें ये कानून बनाया ताकि ऐसे किसी विद्रोही क्रांति को दबाया जा सके। अंग्रेजों ने इसे बनाया था भारतीयों का दमन और अत्याचार करने के लिए उस पुलिस को विशेष अधिकार दिया गया। पुलिस को एक डंडा थमा दिया गया और ये अधिकार दे दिया गया कि अगर कहीं 5 से ज्यादा लोग हों तो वो डंडा चला सकता है यानि लाठी चार्ज कर सकता है और वो भी बिना पूछें और बिना बताये और पुलिस को तो Right to offence है लेकिन आम आदमी को Right to defense नहीं है। आपने अपने बचाव के लिए उसके डंडे को पकड़ा तो भी आपको सजा हो सकती है क्योंकि आपने उसकी ड्यूटी को पूरा करने में व्यवधान पहुँचाया है और आप उसका कुछ नहीं कर सकते। इसी कानून का फायदा उठाकर लाला लाजपत राय पर लाठियाँ चलायी गयीं थीं और लाला जी की मृत्यु हो गयी थी और लाठी चलाने वाले सांडर्स का क्या हुआ था ?कुछ नहीं क्योंकि वो अपनी ड्यूटी कर रहा था और जब सांडर्स को कोई सजा नहीं हुई तो लालाजी के मौत का बदला भगत सिंह ने सांडर्स को गोली मारकर लिया था। और वही दमन और अत्याचार वाला कानून इंडियन पुलिस एक्ट आज भी इस देश में बिना फुल स्टॉप और कौमा में बदले चल रहा है। और बेचारे पुलिस की हालत देखिये कि ये 24 घंटे की के कर्मचारी है। उतनी ही तनख्वाह में, तनख्वाह मिलती है आठ घंटे की ओर डयरी रहती है और जेल मैनुअल के अनुसार आपको पूरे कपड़े उतारने पड़ेगे आपकी बॉडी मार्क दिखानेके लिए भले ही आपका बॉडी मार्क आपके चेहरे पर क्यों न हो। और जेल के कैदियों को अल्युमिनियम के बर्तन में खाना दिया जाता था ताकि वो जल्दी मरे वो अल्युमिनियम के बर्तन में खाना देना आज भी जारी हैं हमारे जेलों में, क्योकि वो अंग्रेजो के इस कानून में है।

Indian civil services act- 1860 में ही इंडियन सिविल सर्विसेस एक्ट

बनाया गया। ये जो **collector** हैं वो इसी कानून की देन हैं। भारत के civil servant जो हैं उन्हें constituonal protection है क्योंकि जब ये कानून बना था उस समय सारे ics अधिकारी अंग्रेज थे और उन्होंने अपने बचाव के लिए ऐसा कानून बनाया था, ऐसा विश्व के किसी देश में नही हैं और वो कानून चुंकि आज भी लागू है। इसीलिए भारत के ias अधिकारी सबसे निरंकुश हैं। अभी आपने थोमस का मामला देखा होगा। इनका कोई कुछ नही बिगाड़ सकता। और इन अधिकारियों का हर तीन साल पर तबादला हो जाता था क्योंकि अंग्रेजो को ये डर था कि अगर ज्यादा दिन तक कोई अधिकारी एक जगह रह गया तो उसके स्थानीय लोंगो से अच्छे सम्बंध हो जायेंगे और वे ड्यूटी उतनी तत्परता से नहीं कर पायेगा या उसके काम काज में ढीलापन आ जायेगा। और वो ट्रान्सफर और पोस्टिंग का सिलसिला आज भी वैसे ही जारी है और हमारे यहाँ के कलैक्टरों की जिंदगी इसी में कट जाती हैं। और ये **collector** होते थे उनका काम था revenue जंग लगान और लूट के माल को **collect** करना इसीलिए **collector** कहलाये और जो कमिश्नर होते थे वो कमीशन पर काम करते थे उनकी कोई तनख्वाह तय नहीं होती थी और वो जो लूटते थे उसी के आधार पर उनका कमीशन होता था। ये मजाक की बात या बनावटी कहानी नहीं है ये सच्चाई है इसलिए ये दोनों पदाधिकारी जम के लूटपाट और अत्याचार मचाते थे उस समय। अब इस कानून का नाम Indian civil services से बदल कर indian civil administrative act हो गया है। 64 सालों में इतना ही बदलाव हुआ है।

क्रमशः

आचरण

धर्म धन्य है। धर्मज्ञ धन्य हैं। उनसे भी अधिक धन्य वह है जिनका जीवन ही धर्म है और जो धर्म प्राण हैं। जीवन का आधार धर्म हो तो अच्छी बात है पर धर्म अधर्म पुण्य और पाप की अनसुलझी गुत्थियाँ न सुलझें तो सामान्य जन क्या करें?क्या सोच विचार आचरण (कृत्य अकृत्य) आचार करें ?करे या न करें का आचार संहिताओं धर्मग्रन्थों पुराण के उपदेशों से संकलन कर जीवन में अपनाने, उतारने, करने का प्रयास करें या कुछ और ?अगर इस काम में लग गए फिर तो आजीविका का चलाना परिवार का पालना सामाजिक दायित्वों का निभाना दुष्कर बन जायेगा। इसी कठिनाई से निजात पाने के लिए तो मानव धर्म का सम्बल ले फिर उसी कंटकाकीर्ण जीवन पथ का निर्माण करे, इससे बात बनती नहीं दिखती। संशय विनाशकारी है। संशयी का विनाश हो जाता है । ऐसा भी संभव है वैसा भी संभव है वैसे लगते तो विकल्प मात्र हैं पर हैं संशय जनक। जरा सोचें–कहीं यह अच्छाई और बुराई भी निर्धारक की मान्यताओं/रूढ़ियों/बोध/मानकों का निष्कर्ष तो नहीं जो आपके अन्तःकरण चतुष्ट्य (मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार) से अनमोदित (अस्वीकृत स्व कर्म द्वारा पूजा की परीधि का उल्लंघक) है।

किसी ने सुनाया और अच्छा लगा, इसीलिए नीचे लिख दिया। लेखक की समझ पढ़े –

जिन्दगी मिट गयी आचरण के लिए
जैसे भाषा मिटी व्याकरण के लिए।
हर अपेक्षित की जग में उपेक्षा हुई
क्या हुआ न्याय दानी कर्ण के लिए।
नग्नता और फैशन करीब आ गए,
देह रोने लगी आवरण के लिए।
टूटते पात ने ए कहा डाल से
जिन्दगी जा रही है मरण के लिए।
शोषितों के व्यथा की कथा जब लिखों

याद रखना उसे उदाहरण के लिए।।
जिन्दगी मिट गयी आचरण के लिए।।।

जानकारी की अधिकता ज्ञान पराभव न दे, यहाँ तक तो ठीक है, पर यह उत्पीड़क बन जाए और अनिर्णय की राह में लाकर खड़ा कर दे, यह उचित नहीं है। कर्तव्य ओर अकर्तव्य में कर्म की गाड़ी फंसे न और संशय/ संदेह न पैदा हो यह जीवन को सुगम और सुचारू रूप से चलते रहने के लिए आवश्यक है।

बिना विचार किए और उतावलेपन की क्रिया या तो विपरीत फलदायी होता है या निष्फल। पर विचार करने में ही जीवन गंवा देना भी उचित नहीं है।यह बोध होना कि हमें करना क्या है जीवन में नवीनता उत्साह और सरसता का संचार करता रहेगा और यह बोझिल नहीं बनेगा/ लगेगा। करूणा मुदिता एवं संतोष आदि मानवीय मूल्य भर नहीं है, अपितु जीवनवर्द्धक हैं, शक्तिदायी हैं।

अपेक्षा और उपेक्षासदासाथ ही रहतें हैं। जहाँ किसी से विशिष्ठ व्यवहार प्रतिफल की आशा नहीं वहाँ वैसा न होने/मिलने पर उपेक्षित (तिरस्कृत अथवा ग्लानि) होने का भाव कैसा ?हमारे चाहने से ही तो सब कुछ नहीं होता। हमारी सोच या मान्यता ही शाश्वत है, सही है, यह जरूरी तो नहीं है। हमारी दृष्टि में जो उचित, न्यायपूर्ण अथवा प्रशंसनीय नहीं है, जगत नियंता की दृष्टि में भी वैसा ही हो, यह आवश्यक तो नहीं है।

जीवन की सार्थकता है जीने में वह भी अविफल रहकर। पश्चाताप यह नहीं कर पाया गलती हो गयी कभी कभी तो ठीक है, पर यह गंभीर मानसिक अवसाद बन जायें और जीवित को स्वयं पर भरोसा समाप्त हो जाये। और उसकी आवश्यकता पर ही प्रश्नचिन्ह लग जाये, यह ठीक नहीं है।

जीवन संयमित रहे पर आचरण के नाम पर दुरूह न हो जाये इतनी न बंध जाय कि स्वयं को निन्दित करने लगे, यह भाव है उपरिलिखित पद्य का। भाषा व्याकरण में इतनी न बंध जाय कि वह भावों को प्रकट करने में बाधक बन जाय। जीवन के लिए आवश्यक है सम्यक् दृष्टि की, जो जैसा है उसे वैसा देखने की, उन्मुक्तता की, सुख और दुख दोनों में निर्लिप्तता की, अकर्मण्यता एवं आलस्य के परित्याग की, जीने और जीने देने की कला के आत्मसात् करने और जो स्वयं को रूचिकर न लगे उसे दूसरे के प्रति न सोचने और करने की। यही तो मुक्ति दे सकेगी बंधनों से संशयों से दुखद परिस्थितियों से। यही सच्चा धर्माचरण भी है। आचरण संहिता पूर्ण नहीं हो सकती। अतः सर्वदेशिक और सर्वकालिक नहीं हो सकती और इसलिए भ्रम/संदेह की उच्छेदक (समाप्त करने वाली) नहीं हो सकती।

समाप्त

05 पृष्ठ का शेष.....

हुई। प्रेम वहीं पनपता है जहाँ का जर्रा जर्रा सत–चिद्–आनन्द से भरपूर हो। इस सपने के ब्रह्माण्ड में भी अखण्ड प्रेम का एक जर्रा भी जिस के दिल में आ जाये, उस के तो होंठ ही सिल जाते हैं, कानों से बहरा तो आखों से अन्धा हो जाता है। प्रेम की कोई भाषा नहीं होती फिर भी वह छिपाने से भी नहीं छिपता। क्यों कि मुख से तो आवाज निकलती नहीं भीगे नैनों से दिल की हालत अपने आप बयान हो जाती है ''कबीर जी'' की वाणी भी नैनों रूपी हृदय में प्रियतम को छिपा कर रिझाने की बात कह रही है।

नैनों की करि कोठरी, पुतली पलंग बिछाय।
पलकों की चिकडारि के, पिऊ को लिया रिझाय।।

कबीर जी

प्रणाम जी
आपकी ही सुन्दरसाथ
कान्ता भगत, दिल्ली।

बीतक

बीतक शब्द का अर्थ है वृत्त या वृत्तान्त। यह गुजराती शब्द है। हिन्दी शब्द कोष में यह शब्द नहीं है। पंजाबी भाषा में हम यह कह सकते हैं कि हमारे साथ जो बीता है उसी का जिक्र है। हमारे सम्प्रदाय मे लगभग दस बारह बीतकों का संग्रह उपलब्ध है। परन्तु इन सभी बीतकों में श्री लालदास कृत बीतक सर्वाधिक प्राचीन, व्यापक और विश्वसनीय तथा प्रामाणिक मानी जाती है।

प्रणामी या निजानन्द सम्प्रदाय का एक ऐसा प्रामाणिक दस्तावेज है जिसमें उस समय की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक तथा भौगोलिक स्थिति का महत्वपूर्ण विस्तृत वर्णन है। इसमें 73 प्रकरण और 4377 चौपाइयाँ है। सम्वत् 1751 से लेकर आज तक हमारे सभी मन्दिरों आश्रमों तथा घरों में निरन्तर इसका पठन पाठन श्रवण मनन और मन्थन किया जा रहा है। श्रावण वदी पंचमी से लेकर भादो वदी अष्टमी तक। स्वामी लालदास जी की बीतक श्री निजानन्द सम्प्रदाय की सैद्धान्तिक व्याख्या के साथ साथ महामति श्री प्राणनाथ जी के जीवन वृत्तान्त का एक अनुपम ग्रन्थ है।

अधिकांश देखा गया है कि महापुरूषों का जीवन चरित्र उनके अनुयाइयों अथवा श्रद्धालुओं द्वारा अपने इष्ट के धामगमन के पश्चात् ही लिखा गया है। श्रद्धा की भावना के कारण उनकी शैली आदर्शवाद की रही है जिससे उनमें प्रशंसात्मकता पूजा भाव के कारण अतिशयोक्ति की पुट दृष्टिगोचर होती है। उनकी दुर्बलताओं तथा दोषों को भी महानताओं में परिणत किया गया है। जिससे विश्वसनीयता संदिग्ध हो जाती है। परन्तु लालदास जी की बीतक इन दोषों से बिल्कुल मुक्त है। यह प्रामाणकिता की कसौटी पर पूरी तरह खरी उतरती है। लालदास जी महामति श्री प्राणनाथ जी के समकालीन ही नहीं थे अपितु उनके समाधिस्थ होने तक उनकी परछाई की तरह उनका दांया हाथ बने रहे।

लालदास संगे चले, खाली लेकर हाथ।
निबाहे आरवार लो, चलो राज के साथ।।

चाहे यात्रा का प्रसंग हो या उपदेश का, मन्त्रणा का प्रसंग हो या यन्त्रणा का, शास्त्रार्थ की घटना हो या व्यवस्था की सेवा का प्रसंग हो या चिन्तन या लेखन का लालदासजी की उपस्थिति सर्वत्र दिखाई देती है। ऐसे प्रसंगों तथा घटनाओं का विवरण बड़ी ही निष्पक्षता तथा तटस्थता भाव से लिखा है। महामति श्री प्राणनाथ जी तथा उनकी शिष्य मण्डली को कितनी बार अपमान, यातना, असफलता, निराशा की वेदनाएं भोगनी पड़ी, बिहारी जी का अशोभनीय असहनीय और अपमान जनक व्यवहार, जाम वजीर का अन्याय, औरंगजेब को न समझा पाने की असफलता, भूखे रहना, भीख मांगना, शिष्यों में मत भेद उत्पन्न हो कर विवाद पेदा होना, ये सभी निष्पक्षता तटस्थता सबूत हैं।

विषय में प्रस्तुति करण में कितनी सजीवता है। इतना बारीकी से वर्णन वही कर सकता है जो केवल प्रत्याक्षदर्शी ही नहीं अपितु इन घटना का हिस्सेदार भी हो। चर्चित प्रसंगों का लालदास जी द्वारा आत्मा साक्षी के रूप में जब हम पढ़ते हैं या सुनते हैं तो ऐसा लगता है कि हमारे सामने वे दृश्य साक्षात् प्रगट हो गए हैं। ऐसा लगता है कि जैसे कोई टी0वी0 कैमरा लगा हो। स्वामी जी तथा उनकी मण्डली किस शहर के, किस गली या मुहल्ले में यहाँ तक किस हवेली के कमरे में हैं और कितने दिनों से क्या कर रहे हैं। स्वामी जी कुरान की आयतों का

तरूजमा करवा रहे हैं जबकि सुलतान के सैनिक उन्हें उसी मुहल्ले में ढूढ़ रहे हैं। दिल्ली का प्रसंग हो या दीप बन्दर का उज्जैन का मंदसौर का औरंगाबाद का या पन्ना का ऐसा लगता है कि जैसे हम सभी पाठक वृन्द सुन्दरसाथ की उस में भागीदारी हो। ऐसा सजीव चित्रण शायद ही आज का दूर दर्शन भी आँखो देखा हाल का वर्णन उपस्थित कर सके।

चित्रण की सजीवता का एक और उदाहरण देखिए। औरंगजेब के जगाने हेतु प्रयास में लालदास और गोवर्धन दास में मतभेद हो गया कि हमारा ईमान चटाई तक ही सीमित है। इस का व्यौरा किरन्तन ग्रन्थ प्रकरण 63 में भी है–

मुँह आगे बिजलीया के चमकत लहरों दई।

तब श्री राज के मुख से ए बातें प्रकट कर कही।।

यह चौपाई बीतक की है।

जब इस घटना का पता श्री जी को चला तो भावावेश में आकर उनका मुख मंडल तथा सारा शरीर देदीप्यमान हो उठा जिस प्रकार चित्रकार अपने चित्रों मे सूर्य की किरणों की रेखाओं द्वारा सूर्य से निकल कर आस पास फैलती सी अंकित करता है, ठीक उसी प्रकार इस दृश्य को श्री लालदास जी ने अपने शब्द चित्र में अंकित कर दिया है। कितना सजीव चित्रण है इस लाल दास की बीतक में।

लाल दास जी की बीतक में ऐतिहासिकता तथा आध्यात्मिकता का भी अनूठा संगम है। इसे बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुति करण किया गया है। हिन्दू मुस्लमानों के पारस्परिक धार्मिक द्वेष को शान्त करने का संदेश वेद, कतेब ग्रन्थों में मैलिकता को खोजने का प्रयास मानव मात्र को परमात्मा की अनुभूति कराना, ब्रह्मसृष्टि को ब्रह्मानन्द रस का आस्वादन कराना मानव मानव में प्रेम का संचार करना, मानव कल्याण और लोक मंगल का सर्वोच्च भाव मोक्ष प्राप्ति के लक्ष्य तक पहुचाने का साधन, राष्ट्रीय भावना पैदा करना, के दिशा निर्देश देने में श्री लालादास जी ने अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया है।

तारतम वाणी श्री कुलजम स्वरूप और बीतक एक दूसरे के पूरक हैं। यदि श्री तारतम वाणी सैद्धान्तिक पक्ष है तो बीतक उसका व्यवहारिक रूप है। सो महामति श्री प्राणनाथ जी के दर्शन को समझने के लिए बीतक बड़ी सहायक है। महाकारण, परमधाम, परब्रह्म सच्चिदानन्द, ब्रह्मसृष्टि, जगत, माया और मोक्ष आदि का बड़े ही विस्तार से अपनी आत्मा को मूलमिलावें में लगा देना ही इस बीतक का परम लक्ष्य है।

हद पार बेहद है, बेहद पार अक्षर।

अक्षर पार वतन है, जागिए इन घर।।

श्री जी के समर्पित साथियों तथा साहयोगियों ने असंख्य कठिनाइयों को झेलते हुए जागनी अभियान में जो सहयोग दिया वह बड़ा ही प्रशंसनीय था। श्री जी व उनके साथ पाँच हजार की जमात के लिए खान–पान तथा आवास का प्रबन्ध कितना कठिन रहा होगा ?कोई उन्हें आश्रम तथा ठहरने के लिए स्थान भी देने से कतराते थे अपितु लूटने को तत्पर रहते। कहीं भी उन्हें चैन से नहीं बैठने दिया। घर–घर टुकड़े माँग कर पेट भरते थे। कहाँ परमधाम की लाडलियाँ सभी ऐश्वर्य से सम्पन्न को कितनी कसौटियों से गुजरना पड़ा पर फिर भी उनके चेहरे पर कोई शिकन नहीं थी अपितु कहते थे –

मोमिन राजी होए के बाते करे खुश दिल।

ए दिन हम कब पावहीं, रहे एक दूजे हिल मिल।।

औरंगजेब को सन्देश पहुँचाना उस समय सिर पर कफन बाँध कर चलना था। सुबह उठतें ही औरंगजेब की दृष्टि यदि किसी हिन्दू पर पड़ जाती थी तो उसका सर कलम कर दिया जाता था–तो ऐसे समय में श्री जी के बारह साथियों ने अपनी जान हथेली पर रख कर औरंगजेब से एकान्त में रूबरू मुलाकात करने का दृढ़ संकल्प लिया। उनके मुख मण्डल का तेज देखने लायक था। औरंगजेब के अधिकारियों द्वारा दिया गया कसाला अपमान जनक वचन, शारीरिक यातनाओं के विष के घूँट की तरह पी गए परन्तु अपना

प्रयास नहीं छोड़ा, पीठ नहीं दिखाई। उनका कहना था–

जो कदी मार डार ही तो हमे मरने का नही डर।

हम जागे अपने धाम में, हम को नही फिकर।।

सुल्तान के धर्म विषयक सलाहकारों के विचारों को काटती हुई ब्रह्मवाणी तथा अपने हृदय ग्राही भावों से सभी को अभिभूत कर दिया। जब बारह मोमिन अपने लक्ष्य में सफल नहीं हुए तो उनके इस बात का बड़ा ही मलाल था। उस समय श्री जी ने उन्हें सान्त्वना देने के लिए अपनी बड़ी पाती लिखी जिसमें उन्होंने ''महान शूरवीर'' शब्दों से सम्बोधन किया और कहा–

मेरे प्राण प्रीतम, साथ मेरे सिरदार।

आतम के आधार हो, जीव के जीवन उस्तवार।।

कोई व्यक्ति जितना ही महान होता है, उसकी विन्रमता उतनी ही महान होती है। श्री जी की विन्रमता हमें व्यास जी से शास्त्रार्थ तथा हरिद्वार के प्रसंग में पूरी तरह दृष्टिगोचर होती है। उस समय भारत की आन्तरिक स्थिति कैसी थी उसकी पूर्ण झलक मिलती है।

मुगल शासकों की विलासिता, राज कर्मचारियों की मनमानी, मुल्लाओं की कहरता, पण्डों–पुजारियों का खोखला पन, बाह्याडम्बर भ्रष्टाचार, नैतिक पतन, जाति–पाति का भेद भाव, नारी उत्पीड़न, गरीब जनता का शोषण, मन्दिरों को तोड़ना, मूर्तियों को हाथी के पावों नीचे कुचला जाना या उनके स्थान पर मस्जिदों का बनाना, पूंजीपतियों का विषाक्त वातावरण, आपसी द्वेष, जन जीवन का आन्तरिक होना, ऐसा वातावरण जहाँ आम आदमी का जीना दूभर था। समाज में सात्विकता तथा चेतन शीलता का ह्रास हो चुका था। श्री जी समाज तथा देश की ऐसी दुर्दशा देख कर बड़े व्यथित थे। वह चाहते थे कि औरंगजेब से मिलकर उससे धर्म चर्चा कर के हिन्दु मुसलमान के वैमनस्य का समाधान निकाला जा सके। लेकिन उसके अनुदार दरबारियों ने ऐसा नहीं होने दिया। यदि उनका मिलाप हो गया होता तो आज देश के मान चित्र पर पाकिस्तान और बंगाल देश दिखाई न देते। हिन्दू मुसलमान में द्वेष विषाक्त वातावरण जो हम आज भोग रहे हैं दिखाई न देता।

श्री जी की सबसे बड़ी विशेषता जो इस बीतक से पता चलती है वह है उनकी लोकतन्त्र की भावना। वह कभी भी अपना निर्णय दूसरों पर नहीं थोपते थे। सभी के स्वतन्त्र विचारों को सम्मान दिया जाता था। सभी को अपनी राय देने की छूट थी।

कोई कहेगा हम को, पूछी नहीं मसलत

तिस वास्ते मै कहत हों, तुम जवाब करो इत्।

सुन्दरसाथ भी आपस में विचार विमर्श करते थे।

साथ सबै मिल कै, परियान किया तिन से।

विचार अपने साथ में, करें आपस मों।।

छत्तीस कारखानों का प्रसंग पाँच हजार सुन्दरसाथ की दैनिक व्यवस्था हेतु कार्य विभाजन निवास, भोजन, वस्त्रादि तथा दैनिक जीवन में उपयोग होने वाली विभिन्न–विभिन्न वस्तुओं की व्यवस्था करना समाजवाद का एक आदर्श रूप प्रस्तुत करता है। परस्पर बाँटना, समाज कल्याण की भावना, सहानुभूति सहयोग और संगठन, समानता, सद्भावना, कर्त्तव्य, परायणता, अनुशासन, स्वलम्बन, निष्पक्षता, सह अस्तित्व के भाव हमारे लिए अनुकरणीय हैं। आज के भौतिक वाद के युग में हम महत्वाकाक्षाओं के मोह जाल में फँसे पड़े हैं। जिस के कारण साम्प्रदायिक और धार्मिक संघर्ष में अध्यात्म तत्व को खो कर विनाश की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

श्री प्राणनाथ जी ने केवल आध्यात्मिकता को धारा प्रवाहित नहीं की अपितु राष्ट्र भावना और समाजोत्थान के लिए राजपूत योद्धाओं और शासकों को जागृत और प्रेरित कर तन–मन–धन से राष्ट्र के स्वाभिमान और सम्मान की रक्षा के लिए समर्पित बनाया।

अष्ट प्रहर की बीतक तो मानो सारी

बीतक का सार है। सुन्दरसाथ अपने अस्तित्व को मिटा कर रात दिन सेवा में लीन रहते थे। छत्रसाल महाराजा होते हुए भी ऐसा कोई प्रहर नही जहाँ उनकी उपस्थिति नहीं श्रृंगार कराना, भोजन खिलाना, पंखा झुलाना हर सेवा के कार्य में हाजिर। देव करण झाड़ू लगाने की सेवा करते थे।

श्री महाराज आवत सब सेवा में सामिल।
अति स्नेह सों सेवा करे पाक दिल निर्मल।।

इस सेवा के कारण ही उन्हें अमीरूल मोमिन कहा गया है।

जो सेवा साकुण्डल करी अपने तन मन धन।
अपना तन सौपयां तो कह्या अमीरूल मोमिन।।

इनकी इस निः स्वार्थ सेवा को देख कर लालदास जी को कहना पड़ा।

सेवा जो महाराजे करी, क्यों कहूं इन जुबां सो।
काहू करी न करसी, ए जब को उपज्यों इण्ड।।

बीतक में ब्रह्माआत्माओं को जो मरातबा दिया गया है। वह आज भी हमारे लिए अनुकरणीय है।

जहां लो इन की आमर सो अखण्ड होत हयात।
सो लैल मेट फजर करे, सो पहुँचे असल जात।।

इस बीतक की सब से बड़ी विशेषता है, जिसे हम आज तक समझ नहीं पाए, वह है महामति श्री प्राणनाथ जी ही अक्षरातीत पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द हैं। बीतककार ने अपनी इस बीतक में अक्षरातीत होने के कितने ही प्रमाण दिए हैं। श्री राज 226 बार अक्षरातीत 24 बार और हक 22 बार लिखा है।

प्यारे सुन्दरसाथ जी ! इस जागनी के ब्रह्माण्ड में प्रियतम श्री प्राणनाथ जी की पहचान किए बिना जागृत होने का दावा करना व्यर्थ है। जो इस स्वरूप को नहीं पहचानेंगे वे योगमाया के न्याय के दिन पश्चाताप के आँसू बहाएंगे।

केशव भट्ट ने भगवान रेवा दास से कहा था '' यह तो अक्षरातीत था तुम न करी पहिचान''। आज हमारी बुद्धि भी प्रभु महाप्रभु आदि समझ रहे हैं। छत्रसाल जी के शब्दों में ''कही तुम साक्षात अक्षरातीत हो, हम चीन्हें तुम्हें बनाए।

श्री ठकुरानी जी साथ ले पधारे हमारे घर।
धनी विना तुम्हें और देखे सो नहीं मिसल मातवर।।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में लाल दास जी की बड़ी महत्वपूर्ण है। जिन परिस्थितियों और प्रवृत्तियों में बीतक की रचना हुई थी वे आज भी विद्यमान हैं। आज का समाज व धर्म विकृत हो चुका है ऐसी स्थिति का समाधान हमें बीतक से ही मिल सकता है। जाति पाति वर्ण–वर्गवाद, भाषा साम्प्रदायिकता के नाम पर फैले वैमनस्य को सुलझाने के लिए बीतक का अध्ययन मनन, पठन, मंथन हमें दिशा निर्देश देगा। श्री प्राणनाथ जी की कथनी और करनी एक थी इसलिए उस समय को सुन्दरसाथ ने उनके उपदेशों को जीवन में पूरी तरह उतारा था। श्री प्राणनाथ जी द्वारा बताए गए सिद्धान्त, राष्ट्रीय, भावनात्मकता, मानव–मानव में प्रेम चारित्रिक शुद्धता को अपनाएं।

अमर लाल सेठी
अबोहर
094632–33945

सुविचार

मन में सोचे हुए कार्य को किसी के सामने प्रकट न करें, बल्कि मननपूर्वक उसकी सुरक्षा करते हुए उसे कार्य में परिणत कर दें।

चाणक्य (कौटिल्य)

रूप और स्वरुप

रुप और स्वरुप इन दोनों शब्दों का प्रयोग अलग–अलग सम्बन्ध में हमारे अन्तःशरीर यानि सूक्ष्म शरीर से जुड़ा होता है। ये कोई गहन ज्ञान का विषय नहीं है। लेकिन रुप और स्वरुप को लेकर हमारे प्रणामी समाज निजानंद सम्प्रदाय में कुछ भ्रान्तियां अवश्य फैली हुई है। भ्रान्तियां कुछ इस प्रकार है।

1. श्री प्राणनाथ जी मिहिरराज ठाकुर का नाम है।

2. श्री प्राणनाथ जी के सद्गुरु श्री देवचन्द्र जी थे।

3. श्री प्राणनाथ जी बड़े संत, विद्वान थे।

4. अनेक सद्गुरुओं का समाज में प्रचलन होना श्री प्राणनाथ जयन्ती एवं धामगमन दिवस जैसे कार्यक्रमों का मनाया जाना आदि।

उपरोक्त भ्रान्तियाँ रुप एवं स्वरुप की सही पहचान ना होने के कारण पैदा हुई है औ इस जागनी ब्रह्माण्ड में सबसे बड़ा मुद्दा ही राज जी की पहचान एवं उनसे अपनी निसबत की पहचान का है। रुप और शरीर की पहचान के लिए एक नाम रख जाता है है जबकि स्वरुप की पहचान व्यक्ति विशेष के द्वारा किए गये कार्यों एवं उसके द्वारा कहलाये शब्दों से होती है। रुप बदलता है नाशवान है, जबकि स्वरुप अविनाशी है। एक जीव अलग–अलग जन्मों में अलग–अलग शरीर धारण करता है। उसका अलग–अलग शरीर में अलग–अलग नाम होगा, वस्तुतः नाम शरीर से ही सम्बन्धित होता है। श्री मिहिरराज ठाकुर का नाम श्री प्राणनाथ नहीं है। मिहिरराज तन का नाम एवं अदंर लीला करने वाले स्वरुप हम सद्गुरु वन्दना करने में बोलते भी है।

बन्दौ सद्गुरु चरण को, करुं सो प्रेम प्रणाम।

अशुभ हरण मंगल करण, श्री देवचंद्र जी नाम।

श्री प्राणनाथ निज मूलपति, श्री मिहिरराज सुनाम।

तेजकुँवरी श्यामा युगल को, पल–पल करुं प्रणाम।।

शास्त्रों की साक्षी के अनुसार परब्रह्म अक्षरातीत के आनंद अंग को ही सद्गुरु की उपाधि दी गयी है। चूंकि देवचन्द्र जी के अंदर परमधाम की आनन्द स्वरु श्यामा जी जो कि अक्षरातीत श्री राज जी का आनंद अंग है। वे विराजमान है इसलिए देवचन्द्र जी को सद्गुरु की उपाधि दी गयी है।

सब आत्माओं के स्वामी (पति) श्री राज जी है। इसलिए श्री प्राणनाथ निजमूल पति कहां गया है। चूंकि श्यामा महारानी एवं अन्य सभी आत्माओं की जागनी करने वाले एक मात्र स्वयं पूर्णब्रह्म अक्षरातीत श्री राज, श्री प्राणनाथ जी ही है। इसलिए सबके सद्गुरु भी है। कहा भी गया है–

सद्गुरु मेंरे स्याम जी, मैं अहनिस चरणे रहूं।

सन्मन्ध मेरा याही सो, मैं ताथें सदा सुख लेऊं।।

उपरोक्त विवेचना में निम्न तथ्य पूर्ण रुप से स्पष्ट हो जाते हैं।

1. श्री प्राणनाथ जी स्वयं अक्षरातीत श्री राज जी को कहा गया है। जिन्होंने सर्वप्रथम श्यामा महारानी श्री देवचन्द्र जी को दर्शन दिया दिया और जागनी की शुरुआत की।

पहले बृज व रास की आड़िका लीलाओं

द्वारा अपनी पहले की हुई लीलाओं की याद कराते रहे। वही स्वरुप श्यामा जी समेत जब श्री इन्द्रावती की आत्म श्री मिहिरराज जी के तन में विराजमान हुआ और वाणी का पूर्ण अवतरण पूर्ण जागनी का ज्ञान श्री कुलजम स्वरुप समस्त ब्रह्माण्डों को अखण्ड करने के लिए सुन्दरसाथ को दिया।

रुहअल्ला आए और दो जामें पहनेगा। ऐसा करके कुरान में साक्षी पहले से ही लिखी है। श्यामा जी के दो जामें पहला श्री देवचन्दे जी एवं इन्द्रावती जी और इनके माध्यम से जागनी करने वाला स्वरुप स्वयं पूर्णब्रह्म अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी श्री राज जी है।

अर्थात् मिहिरराज ठाकुर का नाम श्री प्राणनाथ नहीं है।

बल्कि अक्षरातीत पूर्ण ब्रह्म श्री राज जी ही श्री प्राणनाथ जी है।

2. दूसरी भ्रान्ति कि श्री प्राणनाथ जी के गुरु श्री देवचन्द्र जी है। ये भी उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है। देवचन्द्र जी के अन्दर विराजमान श्यामा जी को श्याम जी के मन्दिर में दर्शन देने वाला और तारतम लाने वाला स्वरुप ही श्री प्राणनाथ जी है। तो फिर प्राणनाथ जी के गुरू या सद्गुरू जी कैसे हो सकते हैं ?हां श्री मिहिरराज ठाकुर के सतगुरू श्री देवचन्द्र जी अवश्य हैं। लेकिन निजानंद सम्प्रदाय में गुरूवाद या गादीवाद जैसी परम्परा नहीं है। हम सब आत्मसम्बंधी हैं एवं हम सबके सद्गुरू श्याम जी स्वयं पूर्णब्रह्म अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी हैं। जिनकी बैठक श्री कुलजम स्वरूप साहब ब्रह्मवाणी में है।

श्री महामति कहे सुनो साथ, देखो खोल वाणी प्राणनाथ।

जिनसे न्यारे ना होए चरण, धनी जी ल्याए धाम से वचन।।

रे हूं नाहीं रे हूं नाहीं, सिध साध सन्त री भगत, ना हूं वैष्णव अपरस आचार।

जात कुटम कुल ऊँच ना नीच, ना हूं वरन अठार।

हम आए हैं इतने काम, ब्रह्मसृष्टि लेने घर धाम।

कोई सन्त ब्रह्मसृष्टि को लेने नहीं आएगा, उसे लेने तो परब्रह्म ही आ सकता है। किसी सन्त, विद्वान के वश की बात नहीं है।

ब्रह्मलीला ढांपी हती, अवतारों दरम्यान।

सो फेर आए अपनी, प्रगट करी पेहेचान।। किरन्तन

विष्णु के दो अवतारों के मध्य ब्रह्मलीला जो बृज में ११ साल ५२ दिन हुई लेकिन दुनियां उसको जान नहीं पायी और विष्णु भगवान, आदिनारायण को ही लीला करने वाला समझती रही। सो अब वह लीला जाहिर हो गयी है।

''अब लीला हम जाहेर करे, जो सुख सैंया हिरदे धरें।''

अब दोबारा स्वय पूर्णब्रह्म ने ही आकर अपनी पहचान दी कि कृष्ण रूप में लीला करने वाला मैं था एवं तुम (आत्माएं) गोपियां थी। ये स्वयं पूर्णब्रह्म श्री प्राणनाथ जी ने आकर बताया। तो हम जान रहे हैं, वरना हम भी दुनियां वालों की तरह भटकते रहते। अब सभी धर्मग्रन्थों में लिखी भविष्यवाणियां सच हो गई हैं। कुरआन के अनुसार कल के दिन खुद खुदा आएगा, सबका न्याय करके बहिश्तों में पूरे ब्रह्माण्ड को अखण्ड मुक्ति (कायमी) देगा।

हिन्दू धर्मग्रन्थों के अनुसार–

शालिवाहन शाकात् तु गत शोडशकं शतम्।

जिवोद्धाराय ब्रह्माण्डे कल्कि प्रादुर्भविष्यति।। भविष्य दीपिका

अर्थात् उपरोक्त विवचेन से स्पष्ट होता है कि भविष्यवाणियों के अनुसार एवं सभी धर्मग्रन्थों के गुह्य रहस्यों को उजागर करने वाले स्वयं की पहचान कराने वाले पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द श्री प्राणनाथ जी कोई संत, विद्वान नहीं स्वयं पूर्णब्रह्म हैं, जो अपनी आवेश शक्ति से जागनी लीला कर रहे हैं। जिनका जन्म नहीं हुआ।

अन्तिम दो भ्रान्तियां कि 'संसार में अनेक

सद्गुरूओं का प्रचलन हो गया है' के विषय में वाणी स्पष्ट करती है– सतगुरू कोईक पाईये कुली में भेखे बिगाडयो वैराग।

अर्थात् कलियुग में केवल एक ही सतगुरू होगा। सद्गुरू का अर्थ है सत्य का ज्ञान देने वाला और सत्य क्या है ?परमात्मा।

ब्रह्म सत्यं जगत् मिथ्या।

परमात्मा कौन है, कहां है, कैसा है और उसका हमारी आत्मा के साथ क्या सम्बन्ध है, हमारा असल घर असल ठिकाना कहां है आदि–आदि प्रश्नों का समाधान करने वाला कौन है ?

स्वयं पूर्णब्रह्म अक्षरातीत श्री राज जी श्री प्राणनाथ जी अर्थात् सतगुरू केवल युगल स्वरूप श्यामा जी एवं श्री प्राणनाथ जी ही हैं। इससे पहले किसी को भी परमात्मा के बारे में निश्चित ज्ञान नहीं था।

कुरआन के अनुसार– खुदा का पता खुदा ही बता सकता है। अलिफ, लाम, मीम का मायना खुदा के अलावा कोई नहीं खोल सकता। ऐसा कुरान कहता है, जो कि श्री प्राणनाथ जी ने खोला।

निराकार के पार थें, तिन पार के भी पार।

बताने वाले स्वयं पूर्णब्रह्म अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी ही सबके सद्गुरू हैं। उनके अलावा कोई भी सत्य का ज्ञान देने वाला न कोई पहले था न कोई होगा।

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी! हम वाणी मन्थन करें, सत्य की पहचान करें, असत्य को छोड़ें, सत्य के साथी बने, अक्षरातीत पूर्णब्रह्म श्री राज जी श्री प्राणनाथ जी के निर्देशों का पालन करें।

साथ चरणों में आया सही, पिछले साथ कारण वाणी कही।

उपरोक्त वचन अक्षरातीत श्री राज जी के हैं। ये वाणी सुन्दरसाथ के लिए आयी है। हम मंथन करे सत्य की पहचान करे एवं दुनियां को इस २८वें कलियुग में आने वाले स्वरूप की पहचान कराएं तब हमारी शाबाशी है। हमारे सद्गुरू स्वयं अक्षरातीत होने के बावजूद निजानंद सम्प्रदाय प्रणामी समाज के ज्ञान का इतना निम्न स्तर कि हम सत्य पर पर्दा डालकर झूठ के स्वरूपों की राह अपनाकर स्वयं को एवं अपने धनी के नाम को कलंकित कर रहे हैं।

एक पत्नी अपने पति के अलावा किसी और की मान बड़ाई करती फिरे, गुणगान करती फिरे जय–जय कार करती फिरें। आप सोचें, आप उसके बारे में क्या कहेंगे ?क्या ये एक पत्नी की शोभा देगाए सुन्दरसाथ जी!

हम परमधाम के अक्षरातीत श्री राज जी की अंगनाए हैं। हमने तारतम लिया है। तो हमारा सम्बन्ध जुडा है। अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी से श्री राज जी से हम उन पर तो पर्दा डालते है और न जाने क्या क्या राग आलाप रहे हैं। सत्य को हम जाहिर नहीं कर रहे हैं। झूठ की पूजा में हमारा समाज उलझा हुआ है। खुद को पहचाने, अपने धनी अक्षरातीत को पहचाने, जो हमारे अंग–संग हैं और मंगल गीत गाते आगे बढ़ते चलें।

प्रगटे पूरण ब्रह्म सकल में, ब्रह्मसृष्टि सिरताज।

ईश्वरी सृष्टि और जीव की, सब आये करो दीदार।।

चेतो सबे सतवादियो, सुनियो सो सतगुर मुख बान।

धनी मेरा प्रभु विश्व का, प्रगटिया परवान।।

कौन प्रगटा है?पूर्णब्रह्म सच्चिदानंद अक्षरातीत श्री राज श्री प्राणनाथ जी सबके सद्गु है। फिर कैसा भेदभाव फिर विचारधाराओं का फर्क क्यूँ?फर्क हमने बनाया हुआ है क्योंकि हम मंथन नहीं करते सत्य और असत्य की पहचान करके सत्य की राह पर आगे नहीं बढ़ते प्रपंच हमें घेरे हुए हैं।

ये वाणी सद्गुरु श्री श्यामा जी श्री राज जी के मुख की वाणी है। जिनकी आवेश शक्ति द्वारा इन्द्रावती जी के माध्यम से हम सुन्दरसाथ को रास्ता दिखाने के लिए आयी है।

शेष पृष्ठ 25 पर.....

बुजुर्गों के प्रति क्यों विलुप्त हो रहा है दायित्व बोध।

बुजुर्गों के प्रति क्यों विलुप्त हो रहा है दायित्व बोध।

युवाओं को समझना होगा वे माता–पिता को साथ लिए बिना भारतीय परिवार व्यवस्थाआ का आगे नही बढ़ा सकते, न ही संस्कारों की रक्षा कर सकते हैं।

माता पिता और अभिभावकों की देख रेख करने के लिए संतानों को कानूनी रूप से बाध्य करने सम्बन्धी जो विधेयक राज्यसभा ने पारित किया है। उसके तहत अनिवार्य है कि बच्चे व रिश्तेदार अपने पालकों, बुजुर्ग रिश्तेदारों की देखभाल अच्छी तरह करें। इस विधेयक के जरियें बुजुर्गों को कानून की लाठी दी है। नए कानून के विधान के तहत बूढ़े मां–बाप की देख भाल संतान का दायित्व है। इससे जुड़े मुकदमें में बुजुर्गो को सस्ती कानूनी सहायता भी मिलेगी। जिन व्यक्तियों को अपने मां–बाप या बुजुर्गो की देखभाल की जिम्मेदारी भी होगी। इस विधेयक में प्रावधान है कि वृद्ध लोग अपनी देख रेख के लिए संतानों या रिश्तेदारों से गुजारा भत्ता हासिल करने का दावा कर सकते हैं, जिसका अनुपालन कानूनी रूप से बाध्यकारी होगा। माता–पिता के जवन की संध्याबेला में देखभाल नहीं करने वाले बच्चों को सजा भुगतनी पड़ सकती है। इतना ही नहीं वे इस सजा के खिलाफ अपील भी नहीं कर पाएंगे। सरकार ने बुजुर्गों की देखभाल सुनिश्चित करने के लिए कानून लाकर लोक कल्याणकारी राज्य होने का प्रमाण दिया है, लेकिन सवाल है कि अब कि अब जिन बुजुर्गों की संपत्ति बच्चों को विरासत में मिलगी क्या वही अपनी देखभाल करने के लिए बच्चों पर कानून की छड़ी चला पाएंगे ?आदर्श स्थिति तो वही होगी कि बुजुर्गों को इस कानून की जरूरत ही न पड़े। इसके लिए युवा पीढ़ी को जहां अपना दायित्व समझना, वहीं बुजुर्ग पीढ़ी को कुछ लचीला रूख अपनाकर सामंजस्य बिठाना होगा।

देशभर में सयुक्त परिवार लगातार घटते जा रहे हैं और एकल परिवार बढ़ रहे हैं और एकल परिवार बढ़ रहे हैं। युवाओं में अलग घर बसाने का चलन बढ़ने से परिवार के बुजुर्ग घर की यादों से चिपके अकेले छूट जाते हैं। इस विधेयक पर चर्चा के दौरान सांसदों ने कहा कि यह दुखद् है कि ऐसे देश में इस प्रकार का विधेयक लाना पड़ा जहां माता पिता के मान सम्मान की बेजोड़ परंपरा रही है। आश्चर्य है कि जिस देश में मातृ देवों भवः, पितृ देवो भवः की अवधारणा है, माता पिता की सेवा को ईश्वर सेवा का दर्जा दिया गया है, मां बाप की देवता से ऊपर रखा गया है, उस देश में मां बाप की देखभाल के लिए कानून बनाना पड़ रहा है। देश में बुजुर्गों की समुचित देखभाल न होने की घटनाओं से

चितिंत संसद ने इससे सम्बन्धित बिल पास कर उन लोगों पर कानून की लगाम कसने की कोशिश की है, जो अपने माता पिता या घर के बड़े–बूढ़े को बेसहारा छोड़ देते हैं। दरअसल बढ़ते सामाजिक बदलाव और टूटते सामाजिक परिवारों ने इस समस्या को और गंभीर बना दिया है।

इस विधेयक पर विचार करने वाली स्थायी समिति का कहना है कि हालांकि देश में बुजुर्गों का सम्मान करने और सेवा करने की स्मृद्ध परंपरा रही है, लेकिन बदलते दौर में बच्चे अपने माता पिता की वैसी देखभाल नही कर रहे है जैसी एक समय में किया करते थे। इसके कारण बुजुर्गों को न केवल भावात्मक अवहेलना का समाना करना पड़ रहा है, बल्कि उन्हें शारिरीक और आर्थिक मदद भी नहीं मिल पा रही है। पर्याप्त सुरक्षा को अभाव में उन्हें अनेक सामाजिक परेशानियों का सामना करना पड़ा रहा है। यद्यपि हमारे भारतीय समाज में बुजुर्गों का हमेशा सम्मान का दर्जा मिल है, लेकिन संयुक्त परिवार टूटने के कारण आज वृद्धों के समक्ष जीवनयापन की कठिनाइयां पैदा हुई हैं। इस वास्तविकता को ध्यान में रखकर ही ऐतिहासिक विधेयक बनाया गया है, लेकिन कानून बनाने मात्र से माता पिता के प्रति नैतिक दायित्व का उद्देश्य पूरा नही होगा। इसके लिए जनजागरण की आवश्कता है। जो औलाद का नैतिक फर्ज है उसके कनूनी रूप देना स्वागत योग्य है, परन्तु नई पीढ़ी इस नैतिक फर्ज समझकर निभाएगी ऐसी उससे अपेक्षा है।

युवाओं को समझना होगा कि जिन्होंने हमें संभाला संभलकर चलना सिखाया, धूप में रहकर भी हम पर छाया की, उन्हें संभाल पाने के सवाल पर हम शून्य की तरफ क्यों देख रहे हैं?हमारे मां बाप ने अपने दायित्व का निर्वाह कानून से डरकर पूरा नहीं किया था। उस निस्वार्थ साधना का जवाब उपेक्षा एवं क्रूरता तो हरगिज नहीं होना चाहिए। अब सवाल मां बाप की सेवा का न रहकर अपनी संस्कृति को बचाने का भी है। उदारीकरण और विश्व बाजार से जुड़ी व्यवस्था में, विदेशी कपड़े–जूते महंगे नही लगते, माता पिता की आंख के मोतियाबिंद का आपॅरेशन, धुधंली दृष्टि के लिए नई ऐनक बनवाना महंगा लगता है। सवाल महंगाई का उतना, नही जितना जज़्बे का है। कहां यह स्वार्थ का अर्थशास्त्र और कहां दृष्टिहीन माता पिता को कावड़ में बिठाकर तीर्थयात्रा करवाता श्रवण कुमार का दायित्व बोध ?।

प्रणाम जी

23 पृष्ठ का शेष.....

निजनाम सोई जाहिर हुआ,
जाकी सब दुनी रह देखत।

मुक्त देसी ब्रह्माण्ड को, आए ब्रह्म आतम सत।।

सत्य को ग्रहण करे, स्वयं की पहचान करे व दूसरों को सत्य की पहचान दे। इसी में हमारा व समस्त विश्व का कल्याण है।

प्राणनाथ परमारथी, सब जग कियो प्रकास।

जिनके चरण प्रताप सो, पाओ सुन्दरसाथ।।

किसी प्रकार की त्रृटि के लिए क्षमा प्रार्थना समस्त सुन्दरसाथ के चरणों में प्रणाम।

आपका सुन्दरसाथ
उमेश पुण्डीर

हौज कौसर तालाब

रंग महल की दक्षिण दिशा में साढ़े चार लाख कोस की दूरी पर हौज कौसर तालाब स्थित है। कुरआन में इसे मदीयं सरः कहा गया है। पुखराज पहाड से यमुना जी निकलती है। पूर्व की तरफ बहती फिर दक्षिण दिशा में मुड़ती है। रंग महल और अक्षरधाम के बीच में बहती आगे निकल जाती है फिर पश्चिम दिशा में मुड़कर चार घड़नालों द्वारा यमुना जी का जल हौज कौसर तालाब में समाता है। हौज कौसर तालाब गोल है और यह तालाब बहुत बड़ा है। इसका विस्तार बहुत है इसलिए ध्यान से धीरे–धीरे ही पढ़ना ताकि समझ में आ जाए। इसके मध्य में गोल टापूमहल हैं जो तीन भोम (मंजिल) ऊँचा है। ताल को पार करके टापूमहल में जाने के लिए जल में अनेक प्रकार के जहाज, नौकाएं, स्टीमर हैं। कई सख्यिां बड़े–बड़े मगरमच्छों पर, कई कछुओं पर, कई सर्पों पर, कई समुद्री घोड़ो आदि पर बैठ कर जल क्रीडा करती है। ताल का जल दूध से भी अधिक उज्ज्वल और मिश्री से भी अधिक मीठा हैं। हौज कौसर ताल को घेर कर सर्वप्रथम ताल की रैंस (जल रौंस) है। रौंस यानि सड़क रास्ता। इसके बाहरी तरफ भोम भर (एक मंजिल) ऊंची १२८ हांस की पाल है, जिसे चौरस पाल कहते है। यह तालाब को ताल की रौंस को घेर कर गोलाई में आई हैं इसके चौड़ाई में २५०–२५0 मन्दिर के चौड़े चार भाग हैं। प्रथम भाग में चारों तरफ कटी पाल व १२४ बड़ी देहुरियां एवं तीन दिशा में घाट की सीढ़ियां है। तीसरे भाग में पड़साल है तथा चौथे भाग में चारों दिशा में चार घाट हैं। पूर्व दिशा में १६ देहुरियां का घाट है तथा पश्चिम दिशा में पीछे झुण्ड का घाट है। ताल की रौंस से चौरस पाल पर पर चढ़ने उतरने के लिए जगह–जगह चौरस पाल के प्रथम भाग पाल पर सीढ़ियां बनी हुई है। इसलिए इसे कटी पाल कहते हैं। चौरस पाल के बाहरी तरफ चारों तरफ गोलाई में घेर कर भोम भर की संक्रमणिक सीढ़ियां उतरी है। इसके बाहरी तरफ ढलकती पाल है। ढलकती पाल के बाहरी तरफ वन की रौंस एवं पुखराजी रौंस हैं।

हौजकौसर ताल की दोनों पालों पर चारों तरफ घेर कर बडोवन के वृक्षों की ३ हारें शोभायमान हैं। जिनमें से दो हारें ढलकती पाल पर है व तीन हारें चौरस पाल पर हैं। इन वृक्षों की रंग बिरंगी डालियां, फूल, फल, पत्रे, आपस में सुन्दर मेहराबों के रूप में मिल कर सुन्दर चंद्रवा के समान छत बना दिए हैं। इसी प्रकार इन वृक्षों की ऊपरा ऊपर पांच भोमे हैं। प्रत्येक भोमों में इनकी मेहराबों में सुन्दर हिंडोले हैं। इस प्रकार हौजकौसर ताल के चारों तरफ पाल, वृक्षों व देहुरियों की अदभुत शोभा है।

एक हीरे की पाल है, तिनमें कई मोहलात।

गिरदे द्योहरी कई वन हैं, क्यों कहूं फल फूल पात।।

हौज कौसर ताल के चारों तरफ जो भोम भर ऊंची चौरस पाल है यह अंदर से पोली है। इस चौरस पाल के नीचे बेशुमार महल है, जिन्हें पाल अंदर के महल कहते हैं। इसमें दो थभों की हारे तीन गलियां घेर कर गोलाई में आई है। इनकी मेहराबों में सुन्दर

झूले है। चौरस पाल के प्रथम भाग में कटी पाल है, जिनके सीढ़ियों के मध्य अनेकों दरवाजे हैं, जिनमें से होकर हम पाल अन्दर के महलों से ताल की रौंस (जल रौंस) में आ जा सकते है।

हौज कौसर ताल के पूर्व दिशा में चौरस पाल पर १६ देहुरी का घाट है। श्री यमुना जी का जल इसके नीचे होते हुए हौज कौसर ताल में प्रवेश करता है। चौरस पाल पर १६ देहुरियां बनी है। एक कमर भर चौरस चबूतरे पर २५ थंभो की छत पर ४ देहुरियों की ४ हारें। जिनमें गुम्मट, कलश, ध्वजा, पताकाओं की अपार शोभा है। १६ देहुरी होने से इसे १६ देहुरी का घाट कहते हैं। चौरस पाल के नीचे बेशुमार महल हैं पर जहां १६ देहुरियां बनी है उसके नीचे महल नहीं है। वहां एक पानी का कुण्ड है। इसके चारों तरफ (देहलान) में गिलम, सिंघासन व कुर्सियां शोभायमान हैं। चारों तरफ थंभों की अदभुत शोभा है। १६ देहुरी के घाट का बड़ा विस्तार है। यहां थोड़ा सा नही बताया है।

हौज कौसर ताल की पश्चिम दिशा में पीछे ढलकती पाल से लगते हुए वन की रौंस पर कमर भर ऊंचे दो चबूतरे हैं जिनमें मध्य मे चौक है। चौक से ढलकती पाल पर ३ सीढ़ियां चढ़ी है। इन चबूतरों से लगकर ढलकती पाल पर दो देहुरियां हैं, जिनमें भोम भर ऊंचे ४–४ थंभों के ऊपर गुम्मट, कलश, ध्वाजा, पताकाओं की सुन्दर शोभा है। इन थंभो पर ८ मेहराबें व २ मेहराबे मध्य चौक में। चौक की मेहराबों ने अन्दर प्रवेश करने का द्वार बना दिया है। यह झुण्ड के घाट का दरवाजा कहलाता हैं। यह मूल द्वार है। जब श्री राज श्यामा जी व संखियां हौज कौसर ताल आते हैं, तो इसी द्वार से प्रवेश करते हैं। सुखपाल पुखराजी रौंस पर उतरते है, फिर सब वन रौंस व ढलकती पाल से मूल द्वार को पार करती है। तब सख्यिां चारों ओर की शोभा देख कर बहुत खुश होती है।

जब आवत इत अर्श से, चढिये इन घाट ताल।
चबूतरे दोए दयोहरी, सीढ़ियां चढ़ते होत खुसाल।।

इस मूल द्वार से संक्रमणिक सीढ़ियां चढ़ते ही झुण्ड का घाट है। यहां दो चबूतरे बने हैं बीच में चौक है। इन दोनों चबूतरों के चारो दिशा में द्वार व वृक्षों की दीवाले है। रंग बिरंगे फल, फूल पत्तों डालियों की ऊपर ऊपर ५ भोम छठी चांदनी बनी है। वृक्षों का झुण्ड होने से झुण्ड का घाट कहते है। जब श्री राज श्यामा जी व सख्यिां हौज कौसर ताल में आते हैं, तब झुण्ड के घाट में बैठ कर शीतल सुंगधित हवा के बीच हांस विनोद करते है।

जब हक आवत ताल को, आए विराजत इत।
सो खेल जल का करके, ऊपर सौक को बैठत।।

घाट के आगे दो बड़ी देहुरियांहै जिनके मध्य में घाट की भोम भर की सीढ़ियां उतरी है। सीढ़िया उतर कर ताल की रौंस (जल रौंस) पर जा सकते है।

नौ देहुरी घाट उत्तर दिशा में चौरस पाल पर है। कमर भर चबूतरे पर ४ थंभ है। इन थंभों की चांदनी पर ३ देहुरियां की ३ हारें है कुल नौ देहुरियां है इसलिए उसे नौ देहुरियां का घाट कहते है। घाट के आगे दो बडी देहुरियां है जिनके मध्य में घाट की भोम भर की सीढ़ियां उतरी है। सीढ़ियां उतर कर ताल की रौंस (जल रौंस) पर जा सकते है।

तेरह देहुरी का घाट हौज कौसर तालाब के दक्षिण दिशा में शोभायमान है। इसकी सारी शोभा ९ देहुरी के घाट के समान ही है, अंतर केवल इतना है कि चबूतरे के ८ थंभों की छत पर ९ देहुरियों की जगह १३ देहुरियां है।

चौरस पाल पर १२४ बड़ी देहुरियां है। देहुरियों के सामने, तालकी तरफ १२४ चांदे है। इन देहुरियो व चांदों पर सुन्दर बैठक बनी है। चांदों के दायें बाये भोम भर की सीढ़ियां कटी पाल पर

उतरी है। दीवार पर कांगरी लगी है। दो बड़ी देहुरियां के बीच में एक एक छोटी देहुरी है। कुल 124 छोटी देहुरियां है, चारों घाटों की वजह से चार देहुरियां कम हो गई है।

टापूमहल के चारों तरफ जल रौंस है। इधर ताल को घेरकर भी जल रौंस है। जिसे ताल की रौंस भी कहते है। दोनों जल रौंसो पर ताल के कमर भर गहरे जल चबूतरे से आगे जल के जमीन तक घेर कर सीढ़ियां उतरी है। जल चबूतरे से आगे जल के जमीन तक घेर कर सीढ़ियां उतरी है। टापूमहल तीन भोम का है। इसके चारों दिशा में बड़े बड़े दरवाजे है। अन्दर मन्दिर थंभों की हार, बगीचे, गलीचे, सिंहासन सब कुछ विस्तार से है। बाहर की तरफ दीवार को लगते 64 गुर्ज आये है। प्रत्येक दो गुर्जो के मध्य सुन्दर वन शोभायमान है। इस प्रकार ताल के मध्य 64 गुर्जों से युक्त टापूमहल 64 पाखंडी वाले कमल के फूल के समान के समान दिखाई देता है।

ज्यों एक फूल चौसठ पांखडी, चार द्वार बने गिरदवाए।
गूरज साठ बने तिन पर, ए खूबी कही न जाए।।

ताल के जल की लहरें जब इन गूर्जो व मन्दिरों से टकराती हैं तो करोड़ो मणियो का प्रकाश चारों ओर जगमगा उठता है।

जल मोहोल तले जो खलके, मंदिर कोट प्रकास मनी झलके।।

श्री राज श्यामा जी व सखियां जब हौज कौसर तालाब में आते है तो सखियां इन हीरे की पालों पर दौडने–खेलने का आनन्द लेती है। यहां जरा भी रेती नहीं है। कभी सखियां बडोवन की डालियां पकड़ कर लटक जाती हैं, कभी बड़ोवन के ऊपर के भोमों में चढ़ जाती हैं। फिर सब सखियां मिल कर अपने प्राण प्रियतम के साथ झूला–झूलती हैं।

ऊपर बन बुजरक, कई हिण्डोले हींचत।
कई डारी बन झूमत, कई विध खेल करत।।

ताल के निर्मल जल में एक एक वस्तु स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। अनेक प्रकार के व अनेक रंगों के कमल के फूल ताल में दिखाई देते है। छोटे जीव मेंढ़क, मछली, कछुआ आदि से लेकर बड़े मगरमच्छत आदि भी अनेक प्रकार से मधुर वाणी सुनाकर, खेल करतब दिखाकर धनी को रिझाते है।

मच्छ कच्छ मुरग मेंढ़क, कई रंग करे अपार।
जुदी जुदी बानी बोलत, स्वर राखत एक समार।।

टापू महल की चांदनी में मध्य में गोल चबूतरा है। सुन्दर पशमी गिलम बिछी है, जिस पर सुन्दर सिंघासन व 6000 कुर्सियां रखी है। 1–1 कुर्सी में 2–2 सखियां बैठती हैं। चांदनी की किनार पर भी चारों तरफ कमर भर ऊंचा चबूतरा है, जिस पर चारों तरफ कुल 3,000 कुर्सियां रखी है, जिन में से 1–1 कुर्सी पर 4–4 सखियां बैठती हैं। 60 गुर्जों की चांदनी पर 60 बड़ी कुर्सियां है जिनमें से प्रत्येक कुर्सी मं 200–200 सखियां बैठती है। बाहरी किनार पर लाल कांगरी जगमगाते हुए बिजली के बल्बों के समान दिखती है। शुक्ल पक्ष की चौदस को चांदनी रात में श्री राज श्यामा जी यहां आते है और चबूतरों पर बैठ कर सखियों को कई प्रकार से प्रेममयी बाते करते हुए आनन्द देते है।

चांद चौदमी रात का, बैठे चांदनी नूर जमाल।
सनमुख सबे बैठाए के, करे खावंद रूहें खुसाल।।

बिना किसी गिनती के, बिना किसी नक्शे क हौज कौसर ताल की शोभा का वर्णन किया है। ना समझ में आए तो आना सरसावा। नक्शे से समझा दिया जाएगा।

बबली (नलिनी ढ़ीगरा)
सरसावा